आनंद सभा

सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से आनंद की ओर

शिक्षक मार्गदर्शिका

(कक्षा 9-12)

राज्य आनंद संस्थान, आनंद विभाग, मध्य प्रदेश शासन

आनंद सभा – सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से आनंद की ओर

आनंद सभा – सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से आनंद की ओर

शिक्षक मार्गदर्शिका (कक्षा 9-12)

शिक्षकों और अभिभावकों के लिए

पहला संस्करण मई २०२२

राज्य आनंद संस्थान
आनंद विभाग, मध्य प्रदेश शासन
माध्यमिक शिक्षा मण्डल परिसर
शिवाजी नगर, भोपाल – ४६२०११

www.anandsansthanmp/in
anandsansthan@gmail.com
+91 755 255 3434

संदर्भ

- आनंद सभा – सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से आनंद की ओर (पाठ्यपुस्तकें)
- आनंद सभा – सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से आनंद की ओर (अभ्यास पुस्तिकाएं)
- आनंद सभा – सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से आनंद की ओर (शिक्षक मार्गदर्शिकाएं)
- आनंद सभा – सार्वभौमिक मानवीय मूल्यों से आनंद की ओर (शिक्षकों, अभिभावकों के लिए तैयारी हेतु शिविर) – ऑनलाइन एवम् प्रत्यक्ष

हमारे अन्य कार्यक्रम

- अल्पविराम
- आनंद क्लब
- आनंद सभा
- आनंद उत्सव (ख़ुशी का त्यौहार)
- आनंदम केंद्र
- आनंद कैलेंडर
- आनंद शिविर
- ऑनलाइन आनंद कोर्स (अलोहा)
- आनंद फ़ेलोशिप

ज्ञान के सार्वभौमीकरण की भावना से हम यह पाठ्य सामग्री सभी को सर्वशुभ हेतु बिना शर्त उपलब्ध कराने का प्रयास कर रहे हैं। इस प्रकाशन की विषयवस्तु यू एच वी टीम (uhv.org.in) के सहयोग के साथ विकसित की गई है। यह सामग्री औपचारिक (मुख्य धारा एवम वैकल्पिक) और अनौपचारिक, दोनो शैक्षणिक उद्देश्यों के लिए उपयोग की जा सकती है।

अतएव यह कार्य CCO 1.0 के अंतर्गत लाइसेंस प्राप्त है।
लाइसेंस की प्रति देखने हेतु, कृपया देखें - https://creativecommons.org/publicdomain/zero/1.0

राष्ट्रगान

जन-गण-मन-अधिनायक जय हे
भारत-भाग्य-विधाता
पंजाब-सिन्धु-गुजरात-मराठा
द्राविड़-उत्कल-बंग
विंध्य-हिमाचल-यमुना-गंगा
उच्छल-जलधि-तरंग
तव शुभ नामे जागे, तव शुभ आशिष मागे,
गाहे तव जय-गाथा।
जन-गण-मंगल-दायक जय हे
भारत-भाग्य-विधाता
जय हे, जय हे, जय हे,
जय जय जय जय हे।

(हर देश का अपना एक विशिष्ट झंडा और राष्ट्रगान होता है। ''तिरंगा झंडा'' भारतवर्ष का राष्ट्रध्वज है और ''जनगणमन'' राष्ट्रगान। राष्ट्रध्वज में ऊपर की पट्टी केसरिया रंग की और नीचे की हरे रंग की होती है। बीच की सफेद पट्टी के बीचों बीच २४ शलाकाओं का नीले रंग में गोल-चक्र होता है। केसरिया रंग त्याग का, सफेद शांति का और हरा रंग प्रकृति की सुन्दरता का प्रतीक है। चक्र का स्वरूप अशोक की सारनाथ-स्थित सिंहमुद्रा में अंकित चक्र की भाँति है यह चक्र सत्य और सब धर्मों का प्रतीक है।

राष्ट्रगान की रचना गुरूदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने की थी। इसमें संपूर्ण देश के लिए मंगल-कामना है। राष्ट्रगान और राष्ट्रध्वज का सम्मान करना हमारा कर्तव्य है। जब राष्ट्रगान गाया जाये या उसकी धुन बजाई जाये अथवा राष्ट्रध्वज फहराया जाये, तब हमें सावधान की स्थिति में खड़े होकर इसे सम्मान देना चाहिए।)

विषय-सूची

प्रस्तावना 7
पाठ्यक्रम के उद्देश्य 9
पाठ्यक्रम प्रक्रिया 11
  समझने की प्रक्रिया 11
अधिगम परिणाम 14
शिक्षकों के लिए आवश्यक दिशा निर्देश 15
  भाषा 15
  कक्षा लेखन पुस्तिका 15
  कक्षा सारांश 15
  उपस्थिति 15
  विद्यार्थियों को स्व-अन्वेषण के लिए सहयोग करना 15
  विषय वस्तु के प्रवाह को बनाये रखना 16
  प्रश्नों के उत्तर देना 17
  इन बातों से बचें 18
  शिक्षक की विद्यार्थियों से अपेक्षा 18
  शिक्षक एक सहायक और सह-अन्वेषक के रूप में 18
मूल्यांकन के लिए दिशानिर्देश 19
शिक्षक पुस्तिका (स्वयं के मूल्यांकन के लिए) 20
शिक्षक उन्नयन कार्यक्रम 21
सामाजिक रूप से प्रासंगिक परियोजनाएं 21
सार्वभौम मानवीय मूल्यों पर संवाद 23
कक्षा ९ का पाठ्यक्रम 29
कक्षा १० का पाठ्यक्रम 32
कक्षा ११ का पाठ्यक्रम 37
कक्षा १२ का पाठ्यक्रम 45

प्रस्तावना

स्नेही शिक्षक एवं अभिभावक, हम इस अभिनव और महत्वपूर्ण प्रयास: "आनंद सभा– सार्वभौमिक मानवीय मूल्य से आनंद की ओर" के पाठ्यक्रम को बच्चों तक प्रस्ताव-पूर्वक पढ़ाने के लिए आपकी रुचि और प्रतिबद्धता की सराहना करते हैं।

हम बच्चे, बड़े, बूढ़े सभी मानव सुखी रहना चाहते हैं; निरंतर सुखी रहना चाहते हैं| इसे हममे में से हर एक अपने में जांच कर देख सकते हैं| इस निरतर सुख को ही आनंद कहा है| नन्द शब्द का अर्थ है प्रसन्न रहना, सुखी रहना, आनंद का अर्थ है- सुख के अभाव का अभाव अर्थात निरंतर सुख

आनंद = अ + अ + नंद
= अभाव + अभाव + सुख
= सुख के अभाव का अभाव = निरंतर सुख

हम आनंद पूर्वक, निरंतर सुख पूर्वक रहना चाहते हैं| इसी के लिए हमारे जिन्दगी के सारे प्रयास हैं|

सुख के बारे आज की प्रचलित सोच यह है कि सुख मिलता है

- अनुकूल संवेदना के आस्वादन से
- दूसरे से भाव पाकर
- सुविधा से, उसके भोग से

इसलिए प्रचलित कार्यक्रम सुविधा-संग्रह (असीमित, किसी भी तरह) के रूप में दिखाई देता है! परन्तु, इन आधार पर कितना भी प्रयास किया जाय, कितनी भी उपलब्धि हो, इससे आनंद, सुख की निरंतरता, को सुनिश्चित नहीं किया जा पाता |

इस सोच के में मूल में मान्यता है कि मनाव केवल शरीर है तथा सुख शरीर से, बाहर से पायी जाने वाली कोई वस्तु |

जबकि वास्तविकता को सीधा सीधा देखने का प्रयास करें तो यह दिख पाता है कि

- मानव केवल शरीर ही नहीं है, परंतु मैं (चैतन्य) और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में है
- सुख = व्यवस्था में होना, व्यवस्था में जीना – स्वयं में, परिवार में, समाज में, प्रकृति में
- आनंद = निरंतर सुख = निरंतर व्यवस्था में होना, व्यवस्था में जीना – जीने के हर स्तर पर

अतः आनंद पूर्वक जीने का आधार

- व्यवस्थित मन – स्वयं में सही समझ, भाव-विचार – व्यवस्था का
- व्यवस्थित शरीर – शरीर में स्वास्थ्य, न केवल रोग का निवारण
- व्यवस्थित वातावरण
    - व्यवस्थित परिवार- संबंध व समृद्धि पूर्वक जीना
    - व्यवस्थित समाज – न्याय व व्यवस्था संपन्न, "सर्वजनहिताय, सर्वजनसुखाय"
    - व्यवस्थित प्रकृति – परस्परपूरकता आधारित, समृद्ध प्रकृति

'सार्वभौमिक मानव मूल्य' के आधारभूत पाठ्यक्रम के माध्यम से हम लोग, अभिभावक और शिक्षक, आनंद पूर्वक जीने की सही समझ (उपरोक्त वर्णित) पर मनन-चिंतन व् अभ्यास करने का प्रयास करेंगे। इसी के साथ साथ हम बच्चों तक इन बातों को पहुंचाने का भी प्रयास करेंगे। इस महत्वपूर्ण कार्य में हम सबकी, हमारी व आपकी प्रमुख भागीदारी है, जिम्मेदारी है।

मूल्य शिक्षा की प्रमुख आवश्यकता एक पूर्ण जीवन जीने की तैयारी के रूप में मानवीय आकांक्षाओं और उसकी पूर्ति के कार्यक्रम को समझने के लिए है| इसके लिए व्यक्ति से परिवार, समाज और प्रकृति/अस्तित्व तक वास्तविकता को समग्र रूप से समझना और इनमें से प्रत्येक स्तर पर मनुष्य की भूमिका को समझना महत्वपूर्ण है।

वर्तमान शिक्षा प्रणाली कई मानकों में कौशल के विकास पर केन्द्रित है; कौशल प्रशिक्षण शुरू करने पर अधिक जोर दिया जा रहा है, जिसमें समग्र दृष्टि के विकास और मानवीय मूल्यों की उपेक्षा हो रही है। वर्तमान शिक्षा पाठ्यक्रम में यह एक महत्वपूर्ण किन्तु अनुपलब्ध कड़ी है| इस कमी का परिणाम व्यक्ति, परिवार, समाज और पर्यावरण के स्तरों पर गंभीर संकटों के रूप में स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। इस आधारभूत पाठ्यक्रम का उद्देश्य लंबे समय से महसूस की जा रही इस आवश्यकता को पूरा करना है। इस संदर्भ में कुछ बातें निम्नलिखित है :-

- यह पाठ्यवस्तु सार्वभौमिक, तर्कसंगत, स्वाभाविक और जाँचने योग्य है और जीने के सभी स्तरों पर व्यवस्था की ओर ध्यान दिलाती है।
- पूरे पाठ्यक्रम के केंद्र में ध्यान विद्यार्थी की चेतना में गुणात्मक विकास करने पर है, एक समग्र विश्वदृष्टि को उजागर करने तथा तृप्ति पूर्वक जीने की योग्यता विकसित करने पर है, ना कि सिर्फ सूचना पहुँचाने के अर्थ में है |
- पूरी पाठ्यवस्तु को स्व-अन्वेषण हेतु प्रस्तावों के रूप में प्रस्तुत किया जाता है| विद्यार्थियों को, इन प्रस्तावों को उनकी सहज स्वीकृति के आधार पर जांचने और जीने में प्रयोगात्मक रूप से सत्यापित करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।
- यह पाठ्यवस्तु संवाद के रूप में पर्याप्त स्पष्टीकरण, उदाहरण और आवश्यकतानुसार पुनरावृत्ति के साथ प्रस्तुत की जाती है, जिससे विद्यार्थी मूल प्रस्ताव को आत्मसात कर सके और अपनी दिनचर्या में उपयोग कर सके।

यह पाठ्यक्रम बड़ी संख्या में व्यावसायिक संस्थानों में सफलतापूर्वक प्रयोग किया जाता रहा है। नियमित पाठ्यक्रम हेतु, इस विषय-वस्तु का निर्माण, वर्ष 2001 में आई. आई. टी. दिल्ली के एन. आर. सी. वी. ई. ई. (नेशनल रिसोर्स सेंटर फॉर वैल्यू एजुकेशन इन इंजीनियरिंग) में विभिन्न दिग्गजों के साथ, व्यापक विचार-विमर्श के बाद तैयार किया गया। मानवीय मूल्यों के इस पाठ्यक्रम को, 2005 से IIIT हैदराबाद में इंजीनियरिंग विद्यार्थियों के साथ, दो-सेमेस्टर के पाठ्यक्रम के रूप में शुरू किया गया| 2009 में, उत्तर प्रदेश प्राविधिक विश्वविद्यालय (जिसे अब AKTU कहा जाता है), लखनऊ ने, विश्वविद्यालय से संबद्ध सभी व्यावसायिक संस्थानों में, 'मानव मूल्यों एवं व्यावसायिक नैतिकता' पर इस आधारभूत पाठ्यक्रम को प्रारम्भ करने का निर्णय लिया, जिसने उच्च तकनीकी शिक्षा में मानव मूल्यों को लागू करने का एक महत्त्वपूर्ण अवसर प्रदान किया। इस पुस्तक का पहला संस्करण, इसी अवसर पर लिखा गया था।

पिछले 10 वर्षों में, भारत के 10 राज्यों में, 4000 से अधिक संस्थानों साथ 40 से अधिक विश्वविद्यालयों ने इस आधार पाठ्यक्रम को अपने शैक्षणिक पाठ्यक्रम के मुख्य भाग के रूप में रखने की पहल की है। हाल ही में, अखिल भारतीय तकनीकी शिक्षा परिषद (AICTE) ने पूरे भारत में तकनीकी शिक्षा के लिए मॉडल पाठ्यक्रम के एक अनिवार्य घटक के रूप में सार्वभौमिक मानव मूल्य को शामिल किया है। इसे तीसरे/चौथे सेमेस्टर में अनिवार्य 3-क्रेडिट पूर्ण-सेमेस्टर पाठ्यक्रम के रूप में शामिल किया गया है और विद्यार्थी प्रवेश कार्यक्रम (student induction programme) के मुख्य भाग के रूप में भी शामिल किया गया है।

हम विश्वास के साथ कह सकते हैं कि 'सार्वभौमिक मानव मूल्य' (UHV) का यह आधारभूत पाठ्यक्रम एक ऐसी सार्वभौमिक सामग्री और प्रणाली प्रस्तावित करता है जिसे शिक्षा में मानवीय मूल्यों को स्थापित करने के लिए प्रभावी ढंग से लागू किया जा सकता है। हम देख पाते हैं कि:

- मानव मूल्य निश्चित हैं।
- इन मूल्यों को किसी भी पृष्ठभूमि के व्यक्ति के साथ साझा किया सकता है, जिससे वह स्वयं में अन्वेषण कर मानवीयता का विकास कर सकता है।
- जब मूल्यों को विद्यार्थी के समक्ष प्रस्ताव के रूप में स्व-अन्वेषण के लिए प्रस्तुत किया जाता है तब विद्यार्थी ज्यादा आसानी से समझ पाते हैं, ('क्या करें' और 'क्या न करें' जैसे निर्देशों की तुलना में)।

- स्व-अन्वेषण स्वयं के विकास का एक प्रभावी तरीका है। निष्ठा पूर्वक अन्वेषण करने वाले व्यक्तियों में भाव - विचार के साथ-साथ कार्य-व्यवहार में भी परिमार्जन स्पष्ट रूप से दिखता है।
- सही समझ की कमी का संकेत समस्याओं के रूप में मिलता है। सही समझ की दिशा में व्यवस्थित प्रयास से, समस्याएं स्वाभाविक रूप से कम होती जाती हैं और अंततः दूर हो जाती हैं।

यह पाठ्यक्रम मुख्य रूप से माध्यमिक और उच्च माध्यमिक कक्षाओं के विद्यार्थियों के लिए बनाया गया है। इस स्तर पर विद्यार्थी न केवल जिज्ञासु होते हैं, बल्कि तर्क करने के लिए भी तैयार होते हैं। स्वयं के लिए जांच परख करते हैं और फिर स्वीकारते हैं, न कि आँख बंद करके मान लेते हैं (जबकि छोटे बच्चे अपने बड़ों का अनुसरण और अनुकरण करके अधिक सीखते हैं।) इसलिए इस पाठ्यक्रम में अन्वेषण और प्रयोग-व्यवहार की विधि का उपयोग किया गया है। एक दशक से अधिक के अथक और संकेंद्रित प्रयास ने हमें इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान की है। हमने उन्हें पाठ्य-पुस्तक एवं अभ्यास पुस्तिका के साथ-साथ, शिक्षक मार्गदर्शिका के इस संस्करण में शामिल करने का प्रयास किया है।

शिक्षकों की तैयारी के लिए शिक्षक उन्नयन कार्यक्रम (FDP) नियमित रूप से आयोजित किये जाते हैं जिनमें प्रत्यक्ष रूप से और इन्टरनेट के माध्यम से, दोनों ही प्रशिक्षण विधियाँ शामिल हैं। इनका वर्णन भी इस मार्गदर्शिका में किया गया है।

यह शिक्षक मार्गदर्शिका सामान्य दिशा-निर्देशों के साथ-साथ व्याख्यान की योजना बनाने में सहायक होगी। व्याख्यान के क्रम के साथ उसमें सम्मिलित होने वाले मुख्य बिन्दुओं को शामिल किया गया है । पाठ्यवस्तु को वास्तविक जीवन की स्थितियों से जोड़ने के लिए अभ्यास एवं रचनात्मक प्रोजेक्ट हेतु सुझाव दिए गए हैं। इसके अलावा, निम्नलिखित सहायक सामग्री वेबसाइट के माध्यम से भी उपलब्ध है:

- व्याख्यान अनुसार प्रस्तुतियां (PPTs)।
- सामान्यतः पूछे जाने वाले प्रश्न और उनके उत्तर।
- अभ्यास सत्रों में प्रयुक्त वीडियो।
- प्रत्येक व्याख्यान के वीडियो (यूट्यूब पर उपलब्ध)।
- शिक्षक विकास कार्यक्रम (FDP) की सूची और पंजीकरण लिंक।
- इस पाठ्यक्रम के संबंध में शिक्षकों और विद्यार्थियों के वास्तविक जीवन में उपलब्धियां।
- नवीनतम संस्करण युक्त सामग्री।

प्रस्तावों को जांचने एवं जी कर देखने के लिए हम आपको विद्यार्थियों के साथ सह-अन्वेषक बनने के लिए प्रोत्साहित करते हैं। हमें विश्वास है कि इससे शिक्षकों और विद्यार्थियों को तृप्ति पूर्वक जीने में सहायता मिलेगी। इसके साथ ही, आप में परिवार, समाज और मानवता के लिए सार्थक योगदान करने की योग्यता भी विकसित होगी। यह कहा जा सकता है कि इस पाठ्यक्रम के शिक्षण में सक्रिय भागीदारी आपके व्यक्तिगत विकास के लिए भी अत्यधिक उपयोगी होगी।

हम आपके सुखद अन्वेषण और तृप्ति दायक शिक्षण यात्रा की कामना करते हैं!

पाठ्यक्रम के उद्देश्य

इस परिचयात्मक पाठ्यक्रम का उद्देश्य है:

1. विद्यार्थियों में निरंतर सुख और समृद्धि सुनिश्चित करने के लिए, 'मूल्यों' और 'कौशल' के बीच आवश्यक पूरकता को जानने में सहायक होना, जो सभी मनुष्यों की मूल चाहना है।
2. छात्रों में दैनिक जीवन एवं व्यवसाय के साथ-साथ मानव एवं सम्पूर्ण अस्तित्व की समझ के आधार पर सुख और समृद्धि पूर्वक जीने के प्रति एक समग्र दृष्टि का विकास करना। ऐसी समग्र दृष्टि ही सहज रूप से सार्वभौम मानव मूल्य एवं मूल्य आधारित जीवन जीने का आधार बनती है।

3. संपूर्णता की ऐसी समझ के आधार पर मानव के नैतिक आचरण, संबंधपूर्ण व्यवहार तथा परस्पर पूरक कार्य प्रणाली के संभावित उपलब्धियों की ओर ध्यान दिलाना।

इस प्रकार इस पाठ्यक्रम का उद्देश्य विद्यार्थियों को एक अत्यंत आवश्यक मार्गदर्शन प्रदान करना है, जिससे वे अपनी पूर्ण मानवीय क्षमता का विकास कर पायें और आगे चलकर एक मानवीय समाज की स्थापना मे भागीदार हो सकें जो न्यायसंगत एवं न्यायपूर्ण हो। इसके लिए आवश्यक है:

1. व्यक्ति से लेकर अस्तित्व समग्र तक जीने के हर स्तर पर व्यवस्था के अध्ययन के द्वारा समग्र दृष्टि का विकास करना और जीने के हर आयाम मे मानव के स्वत्व के बारे मे शोध करना।
2. जीवन के हर स्तर पर तृप्तिपूर्वक जीने की योग्यता और निष्ठा का विकास करना:

    a. व्यक्ति के रूप में
    b. परिवार के एक सदस्य के रूप में अर्थात् मानव-मानव सम्बन्ध में
    c. समाज के एक सदस्य के रूप में
    d. प्रकृति/अस्तित्व की एक इकाई के रूप में

3. व्यवसाय में नैतिक व्यवहार, कार्य और भागीदारी के लिए प्रतिबद्धता और योग्यता को पुष्ट करना (यह बिंदु 2 का एक स्वाभाविक परिणाम है)।

यह उल्लेख करना उचित होगा कि यह पाठ्यक्रम एक 'अपरंपरागत' परन्तु व्यावसायिक नैतिकता के लिए अत्यंत मौलिक दृष्टिकोण देता है, जिसका मुख्य उद्देश्य व्यक्ति में नैतिकता का स्वाभाविक रूप से विकास करना है न कि कोई आचारसंहिता का पालन करवाना या शपथ दिलवाना। एक नैतिक रूप से सक्षम व्यक्ति व्यावसायिक नैतिकता का सहज रूप से संरक्षक होगा (दूसरे उपाय इससे कम ही प्रभावी होंगें)।

पाठ्यक्रम प्रक्रिया

इस पाठ्यक्रम की प्रक्रिया अन्वेषण युक्त और चिंतनशील है। इसमें मानव और अस्तित्व समग्र का व्यवस्थित और तर्कसंगत अध्ययन शामिल है। यह शिक्षार्थी को यह पता लगाने के लिए प्रोत्साहित करता है कि जीवन के हर स्तर पर उनके लिए वास्तव में और स्वाभाविक रूप से क्या मूल्यवान है।

यह प्रक्रिया स्व-अन्वेषण और स्व-मूल्यांकन की है। जो कुछ भी वास्तविकता या सत्य है, उसे शिक्षक द्वारा प्रस्ताव के रूप में कहा जाता है। विद्यार्थियों को प्रत्येक प्रस्ताव को अपने सहज स्वीकृति के अधिकार पर जाँचने और परस्परता में जीकर देखने का अवसर प्रदान किया जाता है। विद्यार्थियों को स्पष्टीकरण मांगने, प्रश्न पूछने, अपनी शंकाओं का समाधान करने आदि के लिए प्रोत्साहित किया जाता है।

यह संवाद की एक प्रक्रिया है। यह शिक्षक और विद्यार्थियों के बीच एक संवाद के साथ शुरू होता है; और फिर विद्यार्थी में स्वयं में संवाद होने लगता है। अपने अंदर का यह संवाद ही स्व-अन्वेषण है जो उनको स्व-विकास की ओर ले जाता है।

इस प्रक्रिया के द्वारा विद्यार्थी में जीने के हर स्तर पर सही समझ और मान्यताओं के बीच अंतर करने की योग्यता विकसित हो जाती है। यह विद्यार्थियों को आत्मविश्वास पूर्वक निर्णय लेने में सहयोग करता है। उनके निर्णय मान्यताओं या साथियों के दबाव से प्रभावित नहीं होते, जिससे स्वयं में और बाहरी वातावरण के साथ भी संगीत स्थापित हो पाता है। यह आगे उनकी अपनी सही समझ के आधार पर कार्य करने के लिए निष्ठा और साहस उत्पन्न करता है।

स्व-अन्वेषण विद्यार्थियों को हर तरह की मान्यताओं का मूल्यांकन करने में सक्षम बनाता है।

इस पाठ्यक्रम में समझने की प्रक्रिया में विद्यार्थियों से विषय वस्तु को रटने मात्र की अपेक्षा नहीं की जा रही है, ना ही उपदेश दिया जा रहा है, ना ही यह आदेश दिया जा रहा है कि वे 'क्या करें' और 'क्या न करें'।

समझने की प्रक्रिया

Process of Understanding

एक बच्चे में सही समझने, सही सीखने और सही करने की मूल चाहना होती ही है। वह सही समझना और सही जीना चाहता ही है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि बच्चे की मूलभूत चाहना व्यवस्था को समझ कर व्यवस्था में जीने की और न्याय को समझकर न्याय पूर्वक जीने की ही होती है। बच्चा अपने माता-पिता एवं परिवार के अन्य सदस्यों को जैसा करता हुआ देखता है उसे सही मानते हुये उनका अनुसरण और अनुकरण करने का प्रयास करता है। वह हर चीज के बारे में जानना चाहता है इसलिये वह बहुत सारे प्रश्न पूछता है। बच्चा आसपास के लोगों के साथ अपने संबंध को देख पाता है और उन्हीं की तरह बनना चाहता है, इसलिये उनके उच्चारण, भाषा, व्यवहार और कार्य को वह ध्यान से देखता है और उन्हें वैसा ही दोहराने का प्रयास करता है; इस प्रक्रिया से वह सीखना, समझना और अभ्यास करना शुरू करता है। इस प्रक्रिया के दौरान वह जो विचार, व्यवहार और कार्य इत्यादि करता है, उनमें से कुछ के द्वारा वह सुखी हो पाता है, अर्थात् तृप्त हो पाता है। किन्तु वह अपने कुछ विचार, व्यवहार और कार्यों जिनमें अंतर्विरोध होता है, उनसे वह दुखी होता है, क्योंकि ये उसे सहज स्वीकार नहीं होते हैं। इस प्रकार से वह दुनिया में जीने का अभ्यास शुरू करता है। बच्चा इस दिशा में बहुत कम उम्र से ही अपने प्रयास करना शुरू कर देता है।

जब तक बच्चा स्कूल जाने की आयु का हो पाता है, तब तक वह घर पर बोली जाने वाली भाषा सीख चुका होता है। वह लगभग 5000 चीजों को पहचान पाता है, उनकी बनावट, आकार, रंग, रूप, गुण इत्यादि की पहचान करने में सक्षम होता है, इन चीजों में से प्रत्येक के साथ कोई न कोई शब्द जोड़ पाता है, इन शब्दों को बोलने में भी सक्षम होता है। इसी प्रकार वह कई अन्य चीजों के बारे में भी पहचान करने और बोल पाने में सक्षम होता है जैसे:

1. अपने बारे में- शरीर के अंग, शरीर के लिये भोजन इत्यादि एवं सम्बन्ध में भाव इत्यादि।
2. परिवार (संबंधों) के बारे में-माता, पिता, भाई, बहन इत्यादि।
3. समाज के बारे में-पास-पड़ोस, समुदाय, गांव, त्योहार इत्यादि।
4. शेष-प्रकृति के बारे में (मानव के अतिरिक्त)– पेड़-पौधे, जानवरों, खेती, प्रकृति से प्राप्त दैनिक उपयोग की अन्य वस्तुयें इत्यादि।

बच्चा सीखने और समझने की प्रक्रिया में दूसरों से स्नेह के भाव के साथ सहयोग की अपेक्षा करता है। सीखने, समझने के इस प्रयास में, बच्चा अनुसरण, अनुकरण से शुरू करके आज्ञापालन और अनुशासन की प्रक्रिया से गुजरता है, जहाँ वह बड़ों को सही मानते हुये उनकी दी हुई आज्ञा का अनुपालन करता है और उनके द्वारा तय किये गये अनुशासन के अनुसार चलने का प्रयत्न करता है। चूंकि बच्चे में जानने की चाहना है इसलिये वह आज्ञा या अनुशासन के रूप में कही जा रही बातों की जाँच परख भी शुरू करता है। वास्तव में बच्चा उन सभी चीजों के बारे में "क्यों" और "कैसे" का उत्तर जानना चाहता है, जिन्हें वह देखता है या जिनके बारे में उसे बताया जाता है। अगर उसे उत्तर मिल पाता है,तो वह उन बातों को सही स्वीकार पाता है और स्वयं में तृप्त हो पाता है। इस प्रक्रिया में उसका आत्मविश्वास बढ़ता है और धीरे-धीरे वह स्व-अनुशासन की स्थिति तक पहुँच पाता है। वह जीने के अर्थ में सही विकल्पों का चयन कर पाता है, जिससे संबंधों में परस्पर-पूरकता का निर्वाह हो पाता है। वह स्वयं में सुखी हो पाता है और दूसरों को भी सुखी करने में सहयोग कर पाता है। इस प्रक्रिया में बच्चे का आचरण निश्चित हो पाता है, मानवीय हो पाता है। यह मानवीय शिक्षा संस्कार की सहज प्रक्रिया है, जिसे यहाँ चित्र में दर्शाया गया है-

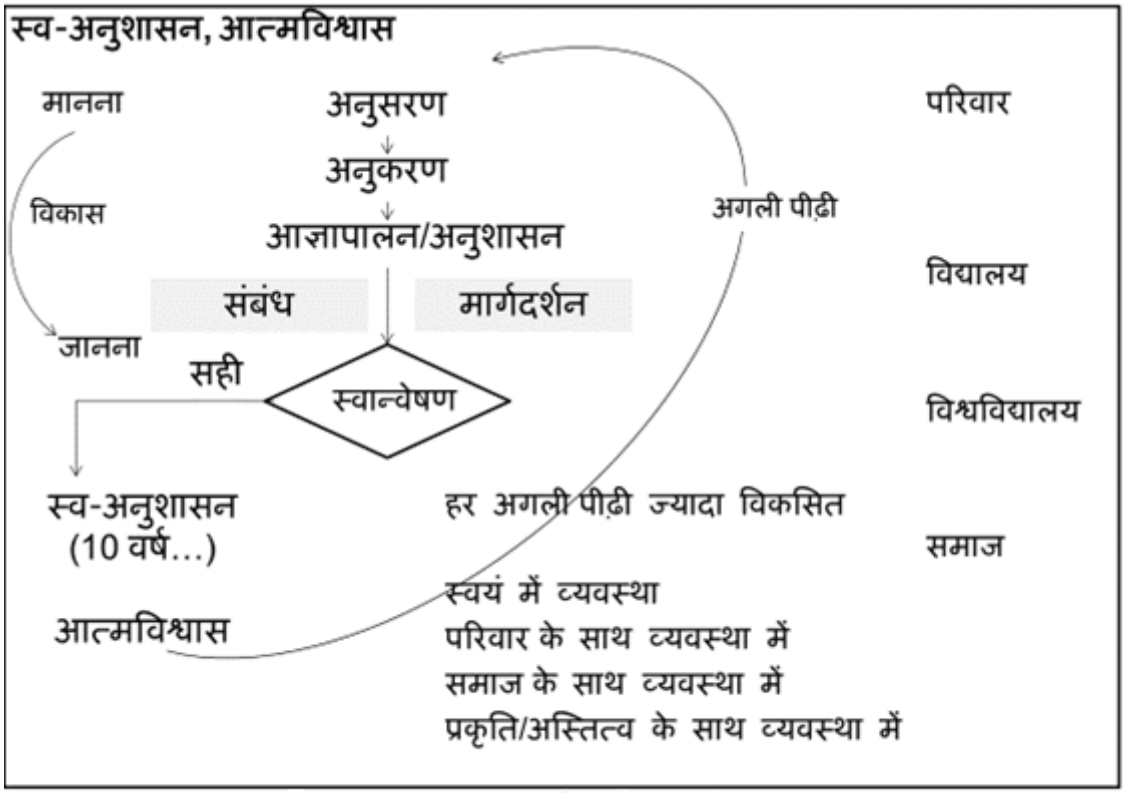

मानवीय शिक्षा संस्कार की सहज प्रक्रिया

स्वयं में जाँच-परख की इस प्रक्रिया में बच्चा यदि मिली हुई सूचनाओं को सही नहीं पाता है, उन्हें व्यवस्था के अर्थ में नहीं देख पाता है, तो बच्चे में पारिवारिक सदस्यों एवं शिक्षकों के द्वारा कही गयी बातों के प्रति संदेह होने लगता है और वह स्वयं उन सूचनाओं के नये विकल्पों को खोजने की, और उनको प्रयोग करने की कोशिश करने लगता है, जो कि दूसरों को मनमानी प्रतीत होती हैं। चूंकि अभी तक बच्चे में जानना पूरा नहीं हुआ रहता है; इसलिये उसके इन नये विकल्पों में भी कोई निश्चितता नहीं रहती अतः इन पर आधारित आचरण में भी अनिश्चितता ही दिखाई देती है, जो कि अमानवीय

आचरण की तरह प्रतीत होता है। इसी कारण बच्चे के आस-पास के लोग अब और अधिक शासन के द्वारा बच्चे को नियंत्रित करने का प्रयास करने लगते हैं। सामान्यतः बच्चों में अधिकांश बुरी आदतें इसी अवस्था में आती हैं। मूलतः इस अवस्था में बच्चा सुखी होने के नये-नये तरीकों और साधनों को खोजने या अपने दुःख से भागने का प्रयास कर रहा होता है जो उसकी स्थिति को और गंभीर बना देती है और यही धीरे-धीरे क्रमशः असंतोष, आत्मविश्वास की कमी, द्रोह, विद्रोह, संघर्ष और युद्ध का कारण बनते हैं।

जहाँ तक समझ की बात है, लगभग 12 वर्ष से कम आयु का बच्चा प्राथमिक रूप से अनुसरण, अनुकरण एवं अभ्यास से सीखता है; और उसके बाद वह स्वयं में जाँच-परख करने को प्राथमिकता देता है। बड़े बच्चे जो कि 12वर्ष से अधिक आयु के होते हैं, वे समझने के लिये पहले स्वयं में जाँच-परख का प्रयास करते हैं; फिर वे प्रेक्षण (observation) और प्रयोग के माध्यम से उस समझ का अपने जीने में स्व-सत्यापन करते हैं। अतः शिक्षक दोनों प्रकार की आयु-वर्ग के बच्चों के लिये अलग-अलग तरह से अध्ययन प्रक्रिया का प्रयोग कर सकते हैं।

बच्चे चाहें किसी भी आयु वर्ग के क्यों न हों उनके सही मार्गदर्शन के लिये एक उचित वातावरण का होना महत्वपूर्ण है। यदि बच्चे अपने माता-पिता, पारिवारिक सदस्यों, शिक्षकों या समाज के जिम्मेदार लोगों से सही मार्गदर्शन प्राप्त कर पाते हैं और उन्हें एक संतोषजनक उत्तर मिल पाता है तो वे वास्तविकताओं को स्वयं में सीधे-सीधे देख पाते हैं, जान पाते हैं। बच्चे का आचरण निश्चित और मानवीय हो पाता है। अब बच्चा अपने लिये सही विचारों और सही कार्यों को तय कर पाता है, उसे किसी बाहरी नियंत्रण या दबाव की आवश्यकता नहीं रहती। वास्तव में यही स्व-अनुशासन है।

दूसरी ओर यदि बच्चे को सही मार्गदर्शन नहीं मिल पाता, संतोषजनक उत्तर नहीं मिल पाता, तो वह भ्रमित रहता है, वह अपनी या बाहर से आ रही मान्यताओं के आधार पर जीने का प्रयास करता है जिससे सार्थक जीना, तृप्ति पूर्वक जीना नहीं हो पाता। यदि बच्चे को तृप्ति पूर्वक जीने के अर्थ में सही मार्गदर्शन उपलब्ध ही नहीं है, तो वह बच्चा क्या करे? बच्चा ऐसी स्थिति में अपने आधार पर ही नये-नये तरीकों को आज़माने के लिये बाध्य होता है, सामान्यतः बच्चा इन स्थितियों में एक प्रकार की मान्यताओं को छोड़कर दूसरे प्रकार की मान्यताओं में फंस जाता है। इस प्रकार की मान्यताओं के आधार पर जीकर स्वयं को सुखी करने में और दूसरों के सुख के अर्थ में सहयोगी हो पाने में वह सफल हो भी पाता है और नहीं भी। यही मनमानी की अवस्था है, जिसके कारण बच्चे के आचरण में अनिश्चितता बनी रहती है। बच्चे के लिये ऐसी स्थिति में बाहरी नियंत्रण और अनुशासन आवश्यक हो जाता है। यह शिक्षा संस्कार की अमानवीय प्रक्रिया है जिसे यहाँ चित्र में दर्शाया गया है-

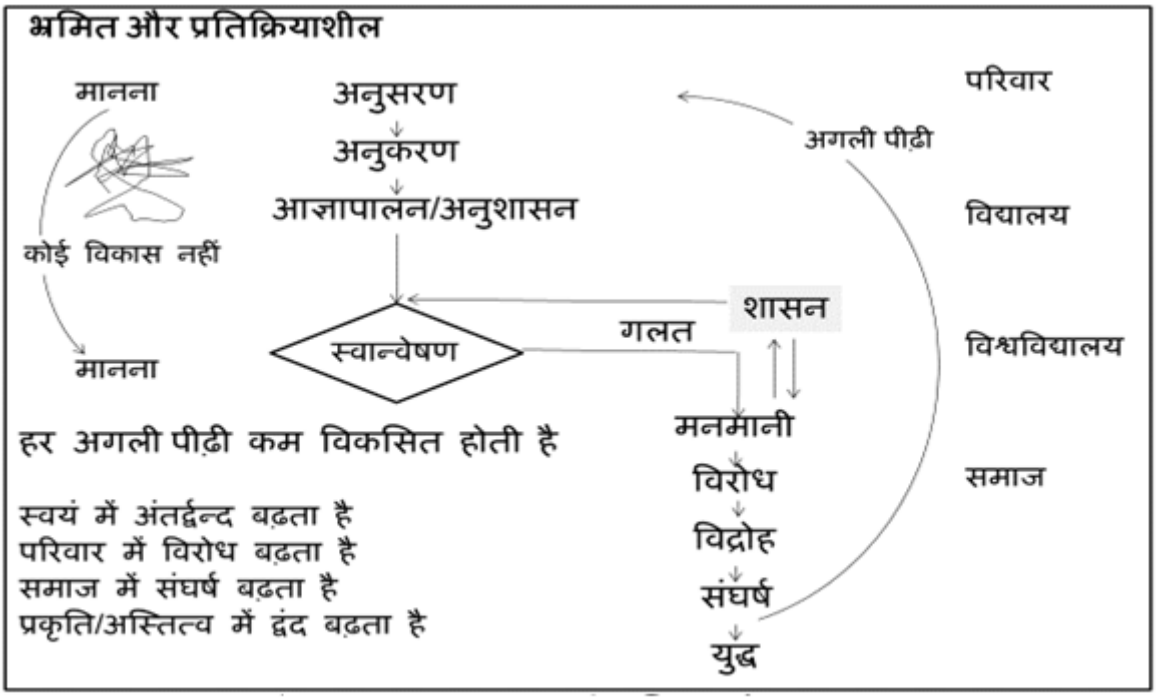

शिक्षा संस्कार की अमानवीय प्रक्रिया

समझने के लिये विश्वास, सम्मान, स्नेह, ममता और वात्सल्य पूर्ण वातावरण का होना अति आवश्यक है। घर, स्कूल एवं समाज में यदि ऐसा वातावरण न हो तो बच्चों के लिये सीखना या मानना तो संभव हो सकता है लेकिन उनमें समझना या जानना नहीं हो पाता है।

प्रत्येक बच्चे में वास्तविकता को सीधे-सीधे देखने, जानने और समझने की क्षमता है ही, अतः आवश्यकता केवल बच्चे की अवस्था अनुसार वास्तविकता पर ध्यान दिलाने की है। मूलतः बच्चे को शिक्षक से इसी मार्गदर्शन की अपेक्षा है। स्थिति चाहे कैसी भी क्यों न हो, बच्चा तो पूरे उत्साह के साथ स्वयं ही जानने का प्रयास करता है।

अधिगम परिणाम

Learning Outcomes

शिक्षा से अपेक्षा को साकार करने के लिए निष्ठावान और योग्य लोगों की आवश्यकता है। उनके पास मूल्यों के साथ-साथ कौशल भी होना चाहिए, जो मूल्य आधारित हो। शिक्षा के लिए, अगला प्रश्न यह है कि छात्रों में अपेक्षित गुण क्या हों जिससे वो अपने लिए, अपने परिवार के लिए, अपनी संस्था के लिए, और समता एवं न्यायपूर्ण समाज के साथ-साथ राष्ट्रीय विकास में सार्थक योगदान देने में सक्षम हो सकें।

हालाँकि छात्रों को व्यक्तिगत पाठ्यक्रम को चुनने में पूर्ण स्वतंत्रता मिलनी चाहिए, किन्तु आज तेजी से बदलती दुनिया में अच्छा, सफल, अभिनव और उत्कृष्ट इंसान बनने के लिए कुछ पाठ्यवस्तुओं, कौशल और तकनीकी क्षमताओं को सभी छात्रों द्वारा सीखा जाना चाहिए (एनईपी 2020 पृष्ठ संख्या 15) जैसे सहयोग और टीम वर्क; मानव मूल्य, व्यावसायिक नैतिकता एवं तार्किकता आदि। शिक्षा के विभिन्न चरणों में (5+3+3+4 प्रणाली) वांछनीय अधिगम परिणाम के रूप में इन गुणों को शामिल किया जा सकता है- समग्र (मानवीय) जीवन दृष्टि, सामाजिक व्यवहार, पर्यावरण के प्रति जिम्मेदार, नैतिक आचरण, स्वास्थ्य और स्वच्छता के प्रति सजग, श्रेष्ठता की स्वीकृति के साथ कृतज्ञता का भाव आदि।

ये गुण प्रत्येक स्तर पर अपेक्षित परिणाम प्राप्त करने के लिए आवश्यक बिंदुओं को तैयार करने में सहयोग करेंगे। समय-समय पर अधिगम परिणामों का मूल्यांकन करना और इनको छात्रों के सर्वांगीण विकास हेतु योजनाओं के साथ जोड़ना वांछनीय होगा।

शिक्षकों के लिए आवश्यक दिशा निर्देश

Orientational Guidelines for Teachers

भाषा

Language

भाषा, चर्चा की जा रही वास्तविकता की ओर ध्यान दिलाने के लिए एक माध्यम है। विषय वस्तु को हिंदी या अंग्रेजी या किसी क्षेत्रीय भाषा में भी साझा किया जा सकता है। महत्वपूर्ण बात यह है कि छात्र और शिक्षक भाषा का उपयोग सहजता से कर पायें।

कक्षा लेखन पुस्तिका

Class Notebook

छात्रों को यह सलाह दिया जाये कि वे लेखन कार्य, कक्षा सारांश, गृह कार्य, स्व-अवलोकन और प्रश्नों आदि के लिए सार्वभौमिक मानव मूल्यों (UHV) की एक समर्पित पुस्तिका बनाएं। आगे के स्तरों को समझते समय उसी पुस्तिका को संदर्भ के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

कक्षा सारांश

Class Summary

प्रत्येक छात्र से अपेक्षा की जाती है कि वह प्रत्येक कक्षा का सारांश अपनी पुस्तिका में लिखे। प्रत्येक कक्षा की शुरुआत में, आप दो या तीन छात्रों को पिछली कक्षा का सारांश पढ़ने के लिए कह सकते हैं। इसके निम्न लाभ होंगें:

- सभी छात्रों को कक्षा में चर्चा किए गए विषय वस्तु के बारे में विचार करने का अवसर मिलेगा।
- छात्रों को कक्षा में अधिक सचेत रहने के लिए प्रेरणा मिलेगी, क्योंकि उन्हें इसका सारांश लिखना है।
- शिक्षक आसानी से देख पाते है कि कौन से बिन्दुओं को छात्र अच्छी तरह से समझा पाए और किन बिन्दुओं को नहीं समझ पाए। इस तरह लिखा गया सारांश, छूट गये बिन्दुओं की ओर ध्यान दिलाता है।
- शिक्षक इस बात का ध्यान रख सकते है कि किस विद्यार्थी ने किस कक्षा में सारांश प्रस्तुत किया है (बिना उसे सार्वजनिक किये हुए)

उपस्थिति

Attendance

विद्यार्थियों को सभी कक्षाओं में उपस्थित रहने हेतु प्रेरित करें, क्योंकि विषय-वस्तु एक वाक्य की तरह है। जैसे अगर किसी वाक्य से कुछ शब्द हटा दिए जाये तो वाक्य का अर्थ समझ में नहीं आता है, इसी तरह कुछ कक्षाओं में अनुपस्थित रहने से समझने का क्रम टूट जाता है और विषय वस्तु स्पष्ट नहीं हो पाती है। इसलिए सभी कक्षाओं में सक्रिय रूप से भाग लेना उनके लिए उपयोगी है। हालांकि, इस पाठ्यक्रम के लिए भी उपस्थिति के नियम, अन्य पाठ्यक्रमों के उपस्थिति नियमों के अनुसार ही लागू होगें।

यदि कोई छात्र कक्षा में अनुपस्थित है, तो उससे व्यक्तिगत रूप से बात करें और अगली कक्षा के बाद अनुपस्थिति का कारण पता करें। यदि वह लगातार दो कक्षाओं में अनुपस्थित रहता है, तो अनुपस्थिति का कारण लिखित रूप में दर्ज किया जा सकता है।

पाठ्यक्रम को सफलतापूर्वक पूरा करने के लिए, छात्र की पर्याप्त उपस्थिति आवश्यक है।

विद्यार्थियों को स्व-अन्वेषण के लिए सहयोग करना

Facilitating Self-exploration in the students

यह एक संवाद की प्रक्रिया है, एकालाप नहीं है। इस पाठ्यक्रम की सफलता विद्यार्थी में उसकी सहज स्वीकृति को देखने की योग्यता बढ़ाने में है, जो हर मानव में स्वाभाविक और अपरिवर्तनीय है। यह स्व-अन्वेषण का आधार बनता है। शिक्षक से अपेक्षा की जाती है कि वह विषय वस्तु को बताने या पाठ्यक्रम को पूरा करने मात्र का उद्देश्य ना रखे, वरन, विद्यार्थियों में स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया को आरम्भ करने को वरीयता दे।

पाठ्यक्रम की वास्तविक सफलता की पहचान विद्यार्थियों में स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया शुरू होना, दृष्टि परिवर्तन होना, भ्रम और अंतर्विरोधों में कमी होना, और आत्मविश्वास में वृद्धि होना है।

शिक्षक की भूमिका मुख्य रूप से एक सहयोगी की होती है, जो वास्तविकता और तथ्यों को व्यवस्थित रूप से प्रस्तावों के रूप में प्रस्तुत करता है, जिससे विद्यार्थी सहज स्वीकृति के आधार पर उनका विश्लेषण और सत्यापन करने में सक्षम हो पाते है। इस संदर्भ में कुछ सुझाव इस प्रकार हैं:

- विद्यार्थियों के स्व-अन्वेषण के लिए प्रस्ताव रखें| उन्हें प्रस्तावों को सही या गलत ना मानने दें, इसे सत्यापित करने में मदद करें|
- प्रस्ताव को स्पष्टता से रखें, आवश्यकतानुसार उदाहरण, आंकड़े, घटनाएँ, कहानियाँ रख सकते है|
- स्वाभाविक रूप से अन्वेषण प्रक्रिया शुरू करने के लिए उचित प्रश्न पूँछें|
- ठहराव के साथ बात रखें, विद्यार्थियों को स्व-मूल्यांकन के लिए और प्रश्न पूछने के लिए पर्याप्त समय दें|
- उनके प्रश्नों को ध्यान से सुनें और जिम्मेदारी के साथ उत्तर दें, भले ही प्रश्न बहुत प्रासंगिक न हो|
- प्रश्नोत्तर के बाद चर्चा किए जा रहे प्रस्ताव पर ध्यान वापस लाएं।
- विषय वस्तु को ख़त्म करने की जल्दी ना करें|

विषय वस्तु के प्रवाह को बनाये रखना

Maintaining the Flow of Content

चर्चा में सभी बिंदुओं को प्रस्ताव से जोड़ने का ध्यान रखा जाना चाहिए ताकि चर्चा के दौरान भटकाव ना हो, विद्यार्थियों का ध्यान पाठ्य वस्तु के बिंदुओं पर बना रहे| मूल रूप से, सभी मनुष्यों को अस्तित्व में (स्वयं में, अन्य मनुष्यों के साथ और प्रकृति/अस्तित्व के साथ) व्यवस्था को समझने की आवश्यकता है। जब हमारे सभी भाव, विचार, व्यवहार और कार्य सही समझ द्वारा निर्देशित होते है, तो व्यवस्था में होने का सुख होता है। इसलिए, प्रत्येक स्तर पर इस अंतर्निहित व्यवस्था पर पर्याप्त बारीकियों के साथ और अलग-अलग उदाहरण से बार-बार ध्यान दिलाया जाना चाहिए, जिससे सही समझ स्थापित हो सके|

इस बात की ओर ध्यान दिलाया जा सकता है कि मनुष्य ज्यादातर अपनी मान्यताओं और संवेदनाओं द्वारा शासित होते हैं और आम तौर पर उन्हें फिर से देखने में बहुत संकोच होता है। साथ ही, इस तरह के विचार को सही ठहराने या बचाव करने के लिए एक मजबूत प्रयास किया जाता है। इस प्रकार, सोच और धारणाओं को जांच करने के लिए, शुरुआत में थोड़ा प्रयास करने की आवश्यकता होती है। हालांकि, एक बार सफलता मिल जाने के बाद, बाद की यात्रा बहुत सुखद और राहत देने वाली होती है।

जब भी कोई नई अवधारणा प्रस्तुत की जाती है, तो सामान्य रूप से विद्यार्थियों में इसकी व्यावहारिकता आदि के बारे में कई तरह की आशंकाएँ होती है। वास्तव में, अवधारणा के निष्कर्ष को समझे बिना भी, वर्तमान समस्याओं के लिए त्वरित उपाय खोजने की कोशिश की जाती है।

पूरे प्रस्ताव को ध्यान से सुनना, फिर सहज स्वीकृति के आधार पर इसे जांचना और जी कर देखना आवश्यक है। उसके बाद ही परिस्थिति विशेष में इसे क्रियान्वित करना संभव है।

यह हमेशा ध्यान में रखने की आवश्यकता है कि सभी चर्चाएँ अंततः हमारे वास्तविक जीवन से संबंधित हैं और इसे, हमारे विचार, व्यवहार और कार्य में परिलक्षित होने की आवश्यकता है। यह हमारे जीने से जुड़े उदाहरणों के माध्यम से पर्याप्त रूप से स्पष्ट होगा ।

व्याख्यान में निम्नलिखित बिंदुओं का समावेश किया जा सकता है:
- पिछले बिन्दुओं का संक्षिप्त पुनरावृत्ति।
- गृहकार्य से जुड़े अथवा विद्यार्थियों द्वारा पूछे गये प्रश्नों पर संक्षिप्त चर्चा।
- किसी निश्चित प्रस्ताव पर चर्चा के सन्दर्भ में:
    - विद्यार्थी को प्रस्ताव के स्व-अन्वेषण का अवसर दें। प्रस्ताव को तुरंत सही या गलत मानने के बजाय, उसे जांचने परखने में उनकी सहायता करें।
    - उन्हें जांचने, स्पष्टीकरण मांगने, प्रश्न पूछने आदि का समय और अवसर दें।
    - चर्चा को एक निष्कर्ष तक ले जाएँ, समाप्त करने में जल्दबाजी न करें।
- व्याख्यान के अंत में सारांश प्रस्तुत करें।
- व्याख्यान खत्म करने से पहले विद्यार्थी की स्पष्टता को सुदृढ़ करने के लिए इसके बारे में एक गृह-कार्य दें।

प्रश्नों के उत्तर देना

Responding to Questions

विद्यार्थी प्रारंभ में प्रश्न पूछने में संकोच करते हैं। कई विद्यार्थी कक्षाओं में रुचि नहीं ले पाते या बड़ों की बातों पर सहसा भरोसा नहीं कर पाते है। ऐसा इसलिए होता है क्योंकि या तो माता-पिता या शिक्षकों (या दोनों) ने स्वाभाविक रूप से पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देने के स्थान पर प्रतिक्रिया दी है या अपनी मान्यता के अनुसार त्वरित उपाय बता दिए हैं| हालांकि, एक बार जब वे शिक्षक के साथ सहज महसूस करते हैं, तब वे पहले खुद को संकोच के साथ व्यक्त करेंगे, फिर धीरे-धीरे आत्मविश्वास के साथ मुखर हो पायेंगें। इसलिए जब वे प्रश्न पूछते हैं, तो उनका उत्तर देना अत्यंत महत्वपूर्ण होता है।

यदि विद्यार्थी प्रश्न ठीक से नहीं रख पा रहा है, तो प्रश्न को ठीक करने में सहायता करें और उससे पूछें कि वास्तव में उसका यही प्रश्न है। प्रश्न का उत्तर देने में जो मौलिक बात है वह उस वास्तविकता को इंगित करना है, जिससे प्रश्न संबंधित है। प्रश्न वास्तविकता के उस हिस्से से उठ रहा है, जिससे वे अपरिचित हैं। उत्तर का सबसे महत्वपूर्ण हिस्सा संबंधित प्रस्ताव को इंगित करना है, जिसे वे जाँच परख करने में सक्षम हैं। इस तरह विद्यार्थी का स्व-अन्वेषण, किसी दिए गए कथन को सीधे-सीधे मान लेने में या उसमें उलझने के बजाय, स्वयं निष्कर्ष पर पहुंचने की ओर ले जाएगा।

उदाहरण के लिए, एक प्रश्न हो सकता है "हम कैसे कह सकते हैं कि सभी मनुष्य समान हैं"? यह प्रश्न मानव की वास्तविकता से जुड़ा है। इस प्रश्न को इस रूप में सुधार किया जा सकता है: किस तरह से एक मानव (मुख्य रूप से स्वयं(मैं)) दूसरे के समान है? यदि विद्यार्थी यह देखने में सक्षम है कि मनुष्य मैं और शरीर का सह-अस्तित्व है, तो शिक्षक विद्यार्थी को स्वयं की सहज स्वीकृति की ओर ध्यान दिला सकता है। इसलिए, जब विद्यार्थी अपनी सहज स्वीकृति के आधार पर यह जांचने का प्रयास करता है, कि वह जैसे स्वयं सुखी होना चाहता है और दूसरे को सुखी करना चाहता है तो वह यह देखने में सक्षम हो जाता है कि दूसरे की भी वही सहज स्वीकृति है। इसलिए, विद्यार्थी यह निष्कर्ष निकालने में सक्षम हो जाता है कि 'मनुष्य समान हैं (कम से कम सहज स्वीकृति के आधार पर)'। इस तरह, विद्यार्थी को स्वयं की चाहना,कार्यक्रम और क्षमता का पता लगाने के लिए क्रमिक रूप से सहयोग किया जा सकता है।

ऐसे प्रश्न हो सकते हैं, जो जीने के अलग-अलग स्तरों से संबंधित हों। ऐसे प्रश्नों को भी मूल प्रस्ताव के बारे में बात करते हुए समाधानित किया जा सकता है। जीने के विभिन्न स्तरों से जोड़ कर दिया जाने वाला उत्तर विद्यार्थियों को एक समग्र दृष्टि विकसित करने और उनके आत्मविश्वास को बढ़ाने में सहयोग करेगा।

उदाहरण के लिए, एक प्रश्न हो सकता है "हम एक चोर का सम्मान कैसे कर सकते हैं"? इसमें तो पहले यह दिखाना आवश्यक है कि सम्मान का अर्थ सही आंकलन है। फिर यह दिखाना आवश्यक है कि चोर भी एक मानव है और उसमें वही सहज स्वीकृति है जो हम सब में है। इसके बाद विद्यार्थियों को उनकी इच्छाओं और उनके स्त्रोतों का अध्ययन करने के लिए कहा जा सकता हैं। यदि विद्यार्थी यह देख पाते है कि जो व्यक्ति चोरी कर रहा है उसने सुविधा को सुख माना हुआ है,और यह मान्यता अन्य व्यक्तियों में भी हो सकती है तो विद्यार्थी चोर का सही आंकलन अर्थात् सम्मान कर पाते हैं। विद्यार्थी यह आसानी से समझ पाते है कि इस तरह की मान्यताएँ परिवार और समाज में प्रचलित हैं। वह यह भी देख पाते है कि ऐसी मान्यताएँ प्रचलित शिक्षा के द्वारा भी मिल रही है। इस तरह विद्यार्थी समाज में सही शिक्षा की आवश्यकता को देख पाते है। इस तरह किसी एक प्रश्न का उत्तर देते हुए भी समग्रता की और ध्यान दिलाया जा सकता है।

इन बातों से बचें

Points to Avoid

- समाधान के स्थान पर समस्या को केंद्र में रख कर चर्चा करना।
- त्वरित उपाय बताना।
- उपदेश देना, या अपनी बात मनवाना।
- विद्यार्थी को समझने में सहयोग करने के स्थान पर उसके बारे में कोई निर्णय बना लेना।
- 'क्या करें' और 'क्या न करें' के रूप में नुस्खे देना।
- इस पाठ्यक्रम को पढ़ाते समय कोई अन्य सामग्री को मिलाना (जो दिशा-निर्देशों के अनुरूप नहीं है-सार्वभौमिक, तार्किक, जांचने योग्य, व्यवस्था की ओर ले जाने वाली) ।

शिक्षक की विद्यार्थियों से अपेक्षा

Teacher's Expectation from the Students

स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया अधिकांश के लिए नई और अपरिचित हो सकती है। शुरुआती चरणों में यह मुश्किल भी लग सकता है । एक शिक्षक जो अपने स्व-अन्वेषण के लिए निष्ठापूर्वक प्रयास कर रहा है, उसे यह दिख सकता है| शिक्षक यह भी देख सकेगा कि वह उन प्रस्तावों को ज्यादा स्पष्ट रूप से संप्रेषित करने और उत्तर देने में सक्षम है जिन्हें वह समझ गया है और जिन्हें वह जी पा रहा है।

यह आवश्यक है कि शिक्षक अपने विद्यार्थियों की वर्तमान स्थिति का उचित संज्ञान लें। भले ही प्रत्येक व्यक्ति में आंतरिक रूप से सही को समझने की और सही को जीने की इच्छा होती है, परन्तु वर्तमान में, उनके विचार और व्यवहार उनकी पूर्व धारणाओं और मान्यताओं से प्रभावित होते हैं, जिनका आंकलन करना मुश्किल हो सकता है। तदनुसार, शिक्षक को धैर्य पूर्वक उनकी जिज्ञासाओं को शांत करने की आवश्यकता है।

एक बार जब विद्यार्थी स्व-अन्वेषण शुरू कर देता है, तो केवल यह आवश्यक रह जाता है कि प्रस्तावों को ठीक से जाँचा जाये और जी कर देखा जाये जिससे व्यवस्था को पूर्णता में समझा जा सके और जिया जा सके।

शिक्षक एक सहायक और सह-अन्वेषक के रूप में

Teacher as a Co-explorer and Facilitator

इस पाठ्यक्रम के अध्यापन में संलग्न होने के साथ-साथ यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि शिक्षक भी साथ-साथ अपनी श्रेष्ठता के लिए प्रयास करे। ऐसे शिक्षक के प्रति विद्यार्थियों में श्रद्धा भाव होगा और वह उनके लिए प्रेरणा स्त्रोत होगा। प्राचीन भारतीय परंपरा में, शिक्षक के लिए प्रयुक्त 'आचार्य' शब्द का अर्थ है 'जिसका आचरण श्रेष्ठ और अपनाये जाने के योग्य है'।

एक बार जब विद्यार्थी शिक्षक और इस पाठ्यक्रम के प्रति आश्वस्त हो पाते हैं, तो वे अपनी व्यक्तिगत समस्याओं को शिक्षक के साथ साझा करना और उन पर चर्चा करना शुरू कर देते हैं और फिर प्रश्नों को अपनी इच्छाओं और विचार से जोड़ कर रख पाते हैं।

जब एक शिक्षक सह-अन्वेषक के रूप में विषय-वस्तु को साझा करता है:

• शिक्षक को पता चल जाता है कि उसने वास्तव में कितना समझा है और अभी भी कितना मान कर जी रहा है।
• कई बातें व्याख्यान को तैयार या साझा करते समय अचानक ध्यान में आती हैं, और स्पष्ट भी हो जाती हैं क्योंकि इस दौरान स्व-अन्वेषण काफी तीव्र हो जाता है।
• शिक्षक में मूल्यों को समझने और जीने के लिए और अधिक निष्ठा विकसित हो जाती है।

इस प्रकार एक निष्ठावान शिक्षक को इस शिक्षण प्रक्रिया से स्वत: उपलब्धि होती जाती है।

मूल्यांकन के लिए दिशानिर्देश

Guidelines for Evaluation

हमारा प्रयास तृप्ति पूर्वक जीने के लिए है। उसके लिए अस्तित्व के मूलभूत सिद्धांतों को समझना आवश्यक है।

किसी भी व्यक्ति का मूल्यांकन करते समय तीन स्थितियों पर ध्यान देना आवश्यक है:
1. प्रारंभिक स्थिति
2. वर्तमान स्थिति
3. वांछित स्थिति

यदि शिक्षक के साथ-साथ विद्यार्थी के लिए भी ये तीन स्थितियां स्पष्ट हैं, तो:

a. यदि वर्तमान स्थिति, प्रारंभिक स्थिति,, से थोड़ा भी बेहतर हो, तो उपलब्धि दिखेगी।
b. वर्तमान स्थिति से वांछित स्थिति तक आगे के प्रयास (स्व-अन्वेषण) के लिए अधिक आत्मविश्वास और निष्ठा होगी।
c. शिक्षक यह देख पाएगा कि मूल्यांकन, किसी व्यक्ति के विकास के अर्थ में होता है। दो विद्यार्थियों के वर्तमान स्थिति की तुलना करने के स्थान पर शिक्षक हर विद्यार्थी का सही मूल्यांकन करते हुए, सभी विद्यार्थियों के विकास पर ध्यान दे पाए।

विद्यार्थी की समझ और जीने का सही मूल्यांकन करने के लिए, विद्यार्थी का स्व-मूल्यांकन और दूसरे विद्यार्थियों द्वारा मूल्यांकन काफी महत्वपूर्ण है। मूल्यांकन करते समय इस बात का ध्यान रखना होगा कि विद्यार्थी ने क्या समझा है क्या नहीं समझा है और जो अभी तक नहीं समझा है उसे कैसे पूरा किया जा सकता है।

वर्तमान शैक्षणिक प्रणाली में, मूल्यांकन मुख्य रूप से लिखित परीक्षा, गृहकार्य और मौखिक परीक्षा के रूप में होता है, इसलिए इन्हें उचित रूप से योजना पूर्वक पूरा करना आवश्यक है। उदाहरण के लिए यदि विद्यार्थी विश्वास के भाव को समझते हैं, तो वे निम्न को पूरा करने में सक्षम होंगे:

- विश्वास के भाव के बारे में प्रस्तुत प्रस्ताव को लिख सकें
- इसे वे अपने उदाहरणों से स्पष्ट कर सकें
- इससे जुड़े सवालों के जवाब दें पायें
- विश्वास के भाव के साथ जी पाएं, यानी उनमें विश्वास का भाव बना रहे। यह सम्बधों के निर्वाह में भी दिखेगा और वे धीरे-धीरे विरोध, द्वेष, क्रोध आदि से मुक्त होते जायेंगे। विद्यार्थी अपने जीने से जुड़े वास्तविक घटनाओं के उदाहरण प्रस्तुत करने में सक्षम होंगे और दूसरे साथी भी इसे देख पायेंगे।

लिखित परीक्षाओं में इस बात को जांचा जा सकता है कि विद्यार्थियों ने मुख्य बिन्दुओं को कितना समझा है और कितना अपने जीने से जोड़ कर देख पा रहे है। लिखित परीक्षा से पहले भी छात्रों का मूल्यांकन कक्षा के दौरान संवाद, अभ्यास सत्र आदि के द्वारा किया जाना उपयोगी होगा । हर अध्याय के आखिर में दिए गए "अपनी समझ को जांचें" के माध्यम से एक अध्ययनशील छात्र को उस अध्याय में क्या और कितना समझ में आ सकता है, इसका एक अनुमान लग सकता है। इस अनुभाग के द्वारा गृहकार्य, प्रोजेक्ट आदि के बारे उपयोगी सुझाव मिल सकते हैं ।

छात्रों की उत्तर पुस्तिकाओं का मूल्यांकन करते समय शिक्षकों को अपनी अपेक्षाओं को निश्चित करना आवश्यक है। यह भी देखना आवश्यक है कि छात्र क्या कहना चाहता है, भले ही उसकी भाषा थोड़ी भिन्न हो। ऐसा इसलिए भी आवश्यक है क्योंकि मूल्य शिक्षा का समावेश अभी अपनी प्रारम्भिक स्थिति में है ।

शिक्षक पुस्तिका (स्वयं के मूल्यांकन के लिए)

Teacher Log (for your own self-reflection)

स्व-मूल्यांकन और निरंतर विकास के लिए, शिक्षक छात्रों के साथ प्रत्येक बातचीत के बाद अपने मूल्यांकन को एक पुस्तिका में लिख सकते हैं, जिनमें निम्न बिंदु होंगें

- व्याख्यान क्रमांक
- छात्रों की उपस्थिति
- व्याख्यान का बिंदु
- बिंदु पर चर्चा के लिए दिया गया समय
- आपका भाव (सम्बन्ध का अथवा शासन का, तृप्ति का अथवा परेशानी का ?)
- विद्यार्थियों का आपके प्रति भाव (सहज या असहज?)
- विद्यार्थियों द्वारा पूछे गये प्रश्न एवं उनका संतोषजनक उत्तर
- विद्यार्थियों की कक्षा में भागीदारी (प्रश्न पूछकर, अपने भाव विचार रख कर)
- पाठ्यवस्तु की पूर्ति (Content coverage): क्या आप उतना भाग पूरा कर पाए जितना रखना निश्चित किया था?
- क्या आपने विद्यार्थियों को कक्षा का सारांश लिखने के लिए याद दिलाया?
- क्या विद्यार्थियों ने अपना गृहकार्य पूरा करके साझा किया?
- क्या आपने नया गृहकार्य दिया?
- व्याख्यान से आपके निष्कर्ष- आगे की योजना, व्याख्यान में सुधार करने के तरीके आदि

शिक्षक उन्नयन कार्यक्रम

Faculty Development Programs (FDPs)

शिक्षकों के उन्नयन के लिए एक प्रकार की योजना नीचे प्रस्तुत की गई है। इसमें शिक्षकों के उन्नयन के लिए क्रमानुसार कार्यक्रमों की जानकारी, वेब साइटों के लिंक और अन्य सामग्री शामिल है।

समझ के लिए स्व-अन्वेषण द्वारा शिक्षक अपने भाव विचार के प्रति सजग हो पा रहे हैं, स्व-मूल्यांकन कर रहे हैं और परिवार, संस्था, समाज एवं वातावरण में व्यवस्था के अर्थ में भागीदार हो पा रहे हैं।

वर्तमान में सहायक शिक्षण सामग्री के साथ निम्न शिक्षक उन्नयन कार्यक्रम उपलब्ध हैं:

- Basic Orientation in Universal Human Values and Ethics: 1-day to 3-day FDP
- UHV-I: Universal Human Values – an Introduction – 5-day on-line Introductory FDP
- UHV-II: Understanding harmony and Ethical Human Conduct or the Foundation Course in Universal Human Values and Ethics – 10-day on-line FDP or 8-day face to face FDP
- UHV-III: Understanding the Human Being, Nature and Existence Comprehensively – 10-day FDP or 8-day face to face FDP
- UHV-IV: Vision for Humane Society – 10-day FDP or 8-day face to face FDP

इनके अतिरिक्त कुछ अन्य पाठ्यक्रम और कार्यशालाएं भी हैं, साथ ही विभिन्न विश्वविद्यालयों द्वारा मूल्य शिक्षा से संबंधित स्नातकोत्तर सर्टिफिकेट और डिप्लोमा पाठ्यक्रम चलाए जा रहे हैं, या योजना बनाई गई है।

विश्वविद्यालय/संस्थान इन पाठ्यक्रमों का उपयोग करके शिक्षक उन्नयन कार्यक्रमों के विभिन्न योजनायें तैयार कर रहे हैं। इस प्रक्रिया में, आधारभूत दिशानिर्देशों, सामग्री और प्रक्रिया का पालन किया जा रहा है।

सामाजिक रूप से प्रासंगिक परियोजनाएं

Socially Relevant Projects

छात्रों की तीनों आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए परियोजनाओं को निम्न प्राथमिकता क्रम में चुना जा सकता है:

• सही समझ
• संबंध (सही भाव और सही विचार)
• व्यवस्था में जीने का कौशल

उदाहरण के लिए, आइए हम वृक्षारोपण की एक परियोजना लें। इससे शिक्षकों और विद्यार्थियों की सहायता निम्न प्रकार से हो पाएगी:

1. प्रकृति में परस्पर पूरकता को जाँचें और समझें।
2. शेष प्रकृति के संवर्धन, संरक्षण और सदुपयोग में मानव की निश्चित भागीदारी को समझने के साथ-साथ स्वयं में समृद्धि के भाव को सुनिश्चित करने के लिए विचार करें।

इस अर्थ में निम्नलिखित के लिए योजना बनाई जा सकती है

a पेड़ पौधों से प्राप्त उत्पादों (जैसे फल, सब्जियां, लकड़ी आदि) का सदुपयोग किस प्रकार हो ।
b लगाए गए पेड़ों का उचित संरक्षण किस प्रकार हो ।
c पर्याप्त मात्रा में वृक्षारोपण किस प्रकार हो ।

वृक्षारोपण परियोजना उपरोक्त बिन्दुओं को पूरा करने में सहायक हो सकती है। परन्तु, अगर ध्यान सिर्फ वृक्षारोपण के कार्य को पूरा करने पर है या इस कार्य द्वारा दूसरों से सम्मान पाने पर है, तो इस तरह की परियोजना इस पाठ्यक्रम के प्रयोजन को पूरा नहीं कर पायेगी।

परियोजनाओं को तय करते समय स्थानीय आवश्यकताओं को ध्यान में रखना उपयोगी होगा- यह भी आवश्यक है कि परियोजना सामाजिक रूप से प्रासंगिक हो। उदाहरण के लिए, किसी शहर के लिए गैसीफायर (gasifier) की परियोजना

बिजली उत्पादन के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती है। इसमें बेकार लकड़ी, पत्ते, कार्डबोर्ड, कागज आदि का उपयोग कर सकते है और आसपास के पावर ग्रिड में स्वच्छ बिजली का योगदान कर सकते है।

परियोजनाएँ तीन प्रकार की हो सकती हैं:

1. अध्ययन (study project)- अवलोकन/परिक्षण/सर्वेक्षण के साथ समाधान का प्रस्ताव- जैसे स्थानीय क्षेत्र में जल स्तर में परिवर्तन और संभावित स्थायी समाधान का पता लगाना,आदि।
2. मॉडलिंग/प्रोटोटाइपिंग (Modelling/Prototyping project)- अल्पावधि के लिए और छोटे स्तर पर किसी समस्या के समाधान का विश्लेषण करना और कोई संयंत्र बनाना- जैसे पेडल चालित या पशु चालित बिजली उत्पादन यंत्र का एक प्रोटोटाइप विकसित करना, आदि।
3. क्रियान्वयन (Implementation project)- दीर्घावधि के लिए और किसी भी स्तर पर समाधान देना- जैसे स्थानीय समुदाय में शाम के स्कूल की स्थापना, ग्रामीण समुदाय में सौर आधारित प्रकाश और पम्पिंग की व्यवस्था, आदि।

कुछ उदाहरण:

1. आपके परिवार द्वारा प्रतिवर्ष उपयोग किए जाने वाले खाद्यान्न (चावल, गेहूं, मक्का, ज्वार आदि) की मात्रा ज्ञात कीजिए। इसे आधार मानकर अपने देश के लिए खाद्यान्न की कुल आवश्यकता ज्ञात कीजिए। अपने देश में खाद्यान्न का कुल उत्पादन ज्ञात कीजिए। क्या उत्पादन पर्याप्त है? इस पर अपने निष्कर्ष दीजिये।
2. परिवार में हम सबसे महत्वपूर्ण किसे देखते हैं – सही समझ, संबंध या सुविधा? क्या हमारा समय और प्रयास उस चीज़ पर लगाया जाता है, जिसे हम महत्वपूर्ण समझते हैं? हम हर महीने के अंत में क्या मूल्यांकन करते हैं? इस पर घर पर चर्चा करें और अपने निष्कर्ष दें।
3. क्या मेरे परिवार के पास सभी की शारीरिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पर्याप्त सुविधा है? क्या मेरा परिवार समृद्ध है? समृद्धि के भाव को महसूस करने के लिए हमें क्या चाहिए? इस पर घर पर चर्चा करें और अपने निष्कर्ष रखें।
4. पता करें कि आपके क्षेत्र में कितना पानी किस रूप में उपलब्ध है (बारिश, नदियाँ, नहरें इत्यादि के रूप में), और कितने पानी की आवश्यकता है? क्या आपका क्षेत्र पानी के अर्थ में समृद्ध है? इस पर अपने निष्कर्ष रखें।
5. पता करें कि वर्ष में कितना पानी उपलब्ध है, और बिजली बनाने के लिए कितना उपयोग किया जाता है? बिजली बनाने के लिए कौन-कौन सी विधियाँ आपके क्षेत्र के लिए उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं? इस पर अपने निष्कर्ष रखें।
6. निचले स्थान से बहते जल से अर्थात् बिना कोई बांध बनाए विद्युत उत्पादन की विधियों बारे में जानकारी प्राप्त करें। क्या यह प्रणाली चक्रीय और परस्पर पूरक हो सकती है? इस पर विचार-विमर्श करें और निष्कर्ष दें।
7. स्थानीय क्षेत्र में जल स्तर में परिवर्तन का पता लगाएं और संभावित स्थायी समाधान सुझाएं।
8. अपने राज्य, आस-पास के राज्यों, पूरे देश, आस-पास के देशों और पूरी दुनिया में सामाजिक रूप से प्रासंगिक और अनिवार्य कार्यों की एक सूची बनाएं।
9. परंपरा से आपने क्या कोई मूल्यवान सीख ली है? उसकी एक सूची बनाएं। आपके परिवार की व्यवस्था में इनका क्या योगदान है, इसका अध्ययन करें।
10. अपने शरीर के स्वास्थ्य और उसे सुनिश्चित करने के लिए कार्यक्रम के बारे में अपनी समझ को लिखें।
11. अपने परिसर के आसपास के उन परिवारों की आवश्यकताओं का अध्ययन करें जो शराब बेच कर जीवनयापन कर रहे हैं। उन तरीकों का सुझाव दें जिससे वे अपनी आवश्यकताओं को समाज के लिए परस्पर पूरक विधि से पूरा कर सकें।
12. 'सुलभ-शौचालय' जैसी योजनाओं और प्रणालियों का अध्ययन करें। ऐसी योजनाओं से किस प्रकार मानव में उद्यमिता का विकास होता है, पर्यावरण का संरक्षण होता है, तथा परिवारों के लिए सुविधाओं की आवश्यकताओं की पूर्ति होती है, इसका अध्ययन कर एक रिपोर्ट लिखें।

सार्वभौम मानवीय मूल्यों पर संवाद

शिक्षा-संस्कार से अपेक्षा

शिक्षा = सही समझ विकसित करना
संस्कार = सही जीने के लिए निष्ठा /तैयारी/ अभ्यास
तैयारी में सही कौशल और तकनीकी शामिल हैं

निश्चित मानवीय आचरण के साथ जीने की योग्यता का विकास
अनुशासन से स्व-अनुशासन

1. सही समझ अर्थात, मानव के रूप में क्या करना है, की स्पष्टता और विवेक – स्वयं में, परिवार में, समाज में, प्रकृति में ...

2. सही भाव – दूसरे मानव के साथ संबंधपूर्वक जीने की योग्यता– परिवार में, समाज में ...

3. समृद्धि के लिए सही **कौशल**, अर्थात्
   - भौतिक सुविधा की आवश्यकता की पहचान करने की योग्यता
   - आवश्यकता से अधिक सुविधा के परस्पर पूरक विधि से उत्पादन के लिए कौशल और तकनीकी का अभ्यास (श्रम के माध्यम से चक्रीय और आवर्तनशील प्रक्रिया से)
   - समृद्धि का भाव

2

मानवीय शिक्षा-संस्कार की प्रक्रिया

संबंध का वातावरण
सही समझ और सही भाव से परिपूर्ण शिक्षक और माता-पिता

सहज वातावरण के अभाव में

शासन का वातावरण
शिक्षक और माता-पिता मे सही समझ और सही भाव का अभाव

3

मूल्य-शिक्षा हेतु आधारभूत दिशानिर्देश

- **सार्वभौमिक (Universal)**
  मूल्य शिक्षा के रूप में जो कुछ भी अध्ययन किया जाता है, वह सभी मनुष्यों के लिए हर समय और हर स्थान पर लागू होना आवश्यक है।
  यह संप्रदाय, पंथ, राष्ट्रीयता, नस्ल, लिंग आदि पर निर्भर न हो।
- **तर्कसंगत (Rational)**
  यह तर्क के अनुकूल होना आवश्यक है।
  यह मान्यताओं पर आधारित न हो।
- **जाँचने योग्य (Verifiable)**
  मूल्य शिक्षा की वस्तु को प्रस्ताव के रूप में रखा जाए जिसे छात्र अपने अधिकार पर जांच कर और जीकर देख सकें,
  और उसे सिर्फ इसलिए मानने को न कहा जाए क्यूंकि यह इस पाठ्यक्रम में कहा गया हैं
- **व्यवस्था को सुनिश्चित करने वाला (Leading to Harmony)**
  मूल्य हमें स्वयं के साथ-साथ दूसरों के साथ भी शांति और व्यवस्था में जीने में सहायक हो (मानव और शेष प्रकृति)

4

साझा करने के क्रम में छात्र एवं शिक्षक से अपेक्षा

छात्र

1.सुखी होना चाहता है और सुखी करना चाहता है ... इसलिए समझने की आवश्यकता है, और समझना चाहता है (इसलिए एक अन्वेषक है)

2. में शिक्षक के लिए स्वीकृति का भाव है। वह यह भी देखने में सक्षम है कि शिक्षक ज्यादा योग्य है, और श्रेष्ठता के लिए प्रयासरत हैं।

3. यह देखने में सक्षम है कि शिक्षक स्वयं में तृप्त है

यदि शिक्षक स्वयं में अतृप्त, दुखी आदि दिखता है, तो छात्र उसे स्वीकार नहीं कर पाते

शिक्षक

1.को स्पष्ट हो कि छात्र समझना चाहता है और समझ सकता है ... अर्थात् विश्वास का भाव

2. में छात्र के मार्गदर्शन की जिम्मेदारी का भाव है ... अर्थात् वात्सल्य का भाव

3. का आचरण निश्चित एवं मानवीय है या इसके लिए प्रयासरत है (सह-अन्वेषक है)

शिक्षक में तृप्ति, सुख, उत्साह, स्फूर्ति और स्पष्टता दिखाई दे।

5

शिक्षक सह-अन्वेषक (Co-explorer) के रूप मे

मैं इस विषय वस्तु के संपर्क में आया ... और इसे सार्थक पाया
- कुछ समझा (Understood something)
- कुछ अन्वेषण किया (Exploring something)

जिम्मेदारी के भाव के साथ सहज रूप में साझा करना चाहता हूँ।

हम सह-अन्वेषक हैं

प्रतिभागी आपसे जुड़ पाते हैं जब वह आपको सुखी, स्थिर/ धैर्यवान व्यक्ति के रूप में देखते हैं। (न कि उपदेशक के रूप मे)

ध्यान दें:
- अपने भाव पर– हर पल
- दूसरा समझना चाहता है और समझ सकता है, यह स्पष्ट है कि नहीं ... हो सकता है कि समझने में कठिनाई हो रही हो (और यह भी हो सकता है कि आपको समझाने में कठिनाई हो रही हो)
- अपनी जीवंतता और उत्साह का

सामान्य गलतियाँ:
- उपदेशात्मक होना (Preaching)
- अपनी बात को जबरदस्ती थोपना (Imposing)
- हावी होना (Dominating)
- सही या गलत कहकर चर्चा को रोक देना (Passing judgement)
- दूसरे से भाव (प्रशंसा ...) पाने की कोशिश करना (Trying to get feeling (praise..) from other)

6

संवाद – स्व-अन्वेषण को पुष्ट करने के अर्थ में

स्व-अन्वेषण को पुष्ट करना

उत्तर खोजने की योग्यता विकसित करना
(न कि कुछ चुने हुए प्रश्नों के उत्तर याद कर लेना)

संवाद (न कि संवादविहीनता)

प्रस्ताव को स्पष्टता से रखना

छोटे एवं सटीक उदाहरणों के साथ स्पष्ट करना

छोटे-छोटे प्रस्ताव रखना जिससे कि दूसरा पृष्ठभूमि (जितनी बात हो गई है) के आधार पर स्वयं में जांच सके

स्व-अन्वेषण के लिये बीच-बीच में थोड़ा रुककर समयदेना

यदि कोई कुछ कहना चाहता है, कोई स्पष्टता चाहता है, प्रश्न पूछना चाहता है... उसका स्वागत करना

ध्यान दें:
- क्या चर्चा संवाद के रूप में है
- प्रस्ताव के बारे में अपनी स्पष्टता कितनी है
- क्या उचित अंतराल पर थोड़ा रुककर समय दिया

सामान्य गलतियाँ:
- विषयवस्तु को केवल पढ़ देना
- बलपूर्वक अपनी बात कहना, अपनी बात मनवाने की कोशिश करना
- अनावश्यक विस्तार, महिमामंडन करना
- वर्तमान स्थिति की निन्दा/ अत्यधिक समीक्षा करना (समाधान पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय समस्याओं के बारे में बात करने के लिए अधिकांश समय लगाना)
- पाठ्यवस्तु को समाप्त करने की कोशिश करना, संवाद के लिए समय न देना
- चर्चा के बिंदुओं के साथ बह जाना

7

वर्तमान स्थिति की समीक्षा के संदर्भ में

जहां तक संभव हो, निंदा से बचना

हर कथन आधारभूत दिशानिर्देश को पूरा करे

स्व-अन्वेषण के लिए उपयुक्त सहयोग देने के बाद इसे प्रतिभागी पर छोड़ दें

यदि समीक्षा करना आवश्यक हो, तो संक्षेप में समीक्षा करना और प्रतिभागियों को जाँचने के लिए प्रेरित करना

अत्यधिक समीक्षा प्रतिभागियों में विरोध का भाव ला सकती है या निराशा उत्पन्न कर सकती है

हमारा उद्देश्य है कि प्रतिभागी समाधान को समग्रता में देख सके जिसे वे समझ एवं जी सकते हैं

ध्यान दें:

- अपने भाव पर-
  - परस्परपूरकता का है या विरोध का?
  - उत्साह है या निराशा?

सामान्य गलतियाँ:

- वर्तमान समस्याओं पर ज्यादा जोर देना
- वर्तमान स्थिति की निंदा करना
- दूसरों की तुलना में अपने को अच्छा दिखाना
- यह कहना कि "यही एकमात्र तरीका है", "अन्य तरीके बेकार हैं"
- मानव परम्परा के प्रति गौरव और कृतज्ञता का अभाव होना
- असंयमित भाषा, सांप्रदायिक उदाहरण, कथन आदि का प्रयोग करना

8

प्रश्नोत्तर के संदर्भ में

प्रश्न करने के लिए समय देना

जब कोई प्रश्न पूछे या विचार दे तो स्वागत भाव के साथ उत्तर देना
प्रश्न/ विचार को पूरा सुनना
(अति आवश्यक होने पर ही बीच में रोकना)

यदि कहने वाले को प्रश्न/ विचार स्पष्ट न हो तो उसे स्पष्ट करना और उसकी पुष्टि कर लेना कि यह उनका प्रश्न/ विचार है
यदि वह मना करे, तो फिर से सुनना और स्पष्ट करना

पृष्ठभूमि और कार्यशाला के स्तर को ध्यान में रखते हुये सटीक उत्तर देना (उससे आगे/ परे न जाना)

छोटे-छोटे प्रस्ताव के साथ उत्तर देना जिसे दूसरा जांच सके– वह उत्तर को पहले चर्चा किये गये प्रस्तावों से जोड़ सके

संपूर्णता के अर्थ में उत्तर देना जो व्यक्ति, परिवार, समाज, प्रकृति, अस्तित्व से जुड़ता हो

बीच बीच में विराम देना और दूसरे को बोलने करने का अवसर देना
यदि संवाद लंबा है तो पुनः मूल वस्तु पर लौट आना
चर्चा के बाद, निष्कर्ष को दोहराना

कुछ निर्देश

वास्तविकता का वह हिस्सा जिसका अर्थ अभी तक स्पष्ट नहीं हैं, उसको स्पष्ट करना।
(महिमामंडन,मान्यता ,रहस्यवाद आदि से बचना)

प्रश्न से जुड़े मुद्दे के संबंध में वास्तविकता को चिन्हित करना तथा भागीदारी को स्पष्ट करना (न कि सिर्फ आलोचना करना)

दूसरे को अन्वेषण करने, जांच - परख करने में सहायता करना
(हावी होने से बचना)

दूसरे को इस पाठ्यवस्तु में अनुसंधान के लिए एवं शिक्षा की मुख्यधारा में लाने को प्रेरित करना

9

टिप्पणी या अवलोकन के संदर्भ में

- ध्यान से सुन लेना

(सहमत या असहमत होने के स्थान पर, सामान्यतः इसके अतिरिक्त किसी और चीज की आवश्यकता नहीं होती)

ध्यान दें :

- अपने भाव पर
  - दूसरे को समझने में सहायता करने का भाव है या चुप कराने का
  - स्वयं में सहजता है या असहज हो गए हैं
- क्या आपको उत्तर पूरी तरह से स्पष्ट है

सामान्य गलतियाँ :

- प्रत्येक व्यक्ति के साथ नहीं जुड़ पाना, उनकी बात पर ध्यान न दे पाना
- केवल कुछ व्यक्तियों से ही संवाद करते रहना
- दूसरे का मजाक बनाना
- पूरी बात को न सुनना, बीच में टोक देना
- प्रत्येक बात का उत्तर देने की कोशिश करना (जैसे कि यह आपकी मौखिक परीक्षा हो)
- विवादास्पद मुद्दों को उठाना या उनमें बह जाना
- स्पष्टता से उत्तर देने के बदले कुछ एक प्रस्तावों को बार-बार दोहराना
- लंबे-लंबे उत्तर देना, प्रभावित करने की कोशिश करना, मनवाने की कोशिश करना
- चर्चा के मुद्दे के स्थान पर किसी और मुद्दे पर बात करना
- संवाद के स्थान पर विवाद करना
- अन्वेषण करने के स्थान पर रटे रटाये उत्तर देना

10

सत्र से पहले कीतैयारी

सार्वभौमिक मानवीय मूल्य शिक्षा की पाठ्यपुस्तक, शिक्षक पुस्तिका, PPTs आदि पढ़ना
निश्चित कर लेना कि प्रस्ताव का प्रत्येक शब्द और उससे जुड़ा चित्र स्पष्ट हो पा रहा है
सत्रों के विस्तृत नोट्स बनाना
उदाहरणों की सूची बनाना*
कार्यशालाओं के ऑडियो सुनना
कार्यशालाओं के वीडियो देखना और सुनना
अपना खुद का वीडियो/ ऑडियो रिकॉर्ड करना और उसको सुनना
सुधार वाले बिंदुओं को अलग से लिखना
अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्नों की रिकॉर्डिंग सुनकर तैयारी करना
सत्र की समयबद्ध तरीके से योजना बनाना

*(*उदाहरणों की पहले से एक सूची बना सकते हैं और सुनिश्चित कर सकते हैं कि वे उदाहरण पाठ्यवस्तु के अर्थ को व्यक्त करने के लिए उपयुक्त हैं, और वे सार्वभौमिक मानवीय मूल्य शिक्षा के सभी आधारभूत दिशानिर्देशों का पालन करते हैं।)*

11

सत्र के दौरान प्रस्तुतीकरण

स्वयं का परिचय और प्रस्ताव को साझा करने के लिए प्रेरणा (पहले सत्र में) – उत्साह के साथ
सत्र की पाठ्यवस्तु को स्पष्टता से प्रस्तुत करना
संवाद स्थापित करना (प्रतिभागियों और पाठ्यवस्तु को वास्तविक जीवन से जोड़ते हुये)

प्रमुख बिंदुओं को शृंखला में जोड़ते हुए उप-प्रस्तावों के रूप में प्रस्तुत करना एवं चर्चा करना

मुख्य बिन्दु एक **प्रस्ताव** के रूप में रखना — अगला मुख्य बिन्दु

फिर इसकी व्याख्या करना

प्रस्तावों को स्पष्ट करने के लिए दैनिक जीवन से जुड़े हुए उदाहरण लेना (उत्साह और स्फूर्ति के साथ)

प्रस्तावों के अन्वेषण के लिये प्रतिभागियों से प्रश्न पूछना

स्व-अन्वेषण के लिए बीच-बीच में रुककर समय देना

प्रतिभागियों द्वारा पूछे गये प्रश्नों का उत्तर देना , शंकाओं का समाधान करना

आगे बढ़ने से पहले मुख्य बिन्दु पर ध्यान आकर्षित कराना

सत्र के अंत में सार-संक्षेप रखना

स्व -अन्वेषण के लिये गृहकार्य देना

(कुछ एक शब्दों जैसे "ठीक है", "है न",...का बार-बार प्रयोग न करना)

12

सत्र के बाद प्रस्तुतीकरण में सुधार के संदर्भ में

सत्र के दौरान जिन बिंदुओं(प्रस्ताव, प्रश्न, उदाहरण आदि) पर प्रस्तुति तृप्तिदायक नहीं रही उन बिंदुओं को लिख लेना
उन बिंदुओं पर ध्यान देना और स्पष्ट करना
कुल मिलाकर अपना एक मूल्यांकन करना और बेहतर प्रस्तुति की तैयारी करना

13

कक्षा ९ का पाठ्यक्रम

सत्र	विषय	अभ्यास पुस्तिका के लिए बिंदु
1	**अध्याय-1: मूल्य-शिक्षा को समझना-** तृप्ति-पूर्वक जीना, तृप्ति-पूर्वक जीने के लिये शिक्षा	१. हम सभी तृप्ति-पूर्ण, व्यवस्थित जीवन जीना चाहते हैं और उसी के लिये कार्य कर रहे हैं। इसे ही हम मूल्यवान मानते हैं।
2	मूल्य-शिक्षा, कौशल-शिक्षा, मूल्य एवं कौशल की परस्पर-पूरकता, कौशल से अधिक मूल्य की वरीयता	२. किसी वस्तु का मूल्य बड़ी व्यवस्था में उसकी भागीदारी है, इस कथन को विभिन्न उदाहरण के आधार पर जांचे|
3	मूल्य-शिक्षा की आवश्यकता और उसके प्रमुख आशय का महत्व, हमारे लक्ष्य की सही पहचान, समग्र- दृष्टि का विकास, समग्र दृष्टि के साथ जीने के लिये कार्यक्रम की स्पष्टता, हमारी मान्यताओं का मूल्यांकन, वर्तमान समस्याओं का समाधान, नैतिक-योग्यता का विकास, मूल्य-शिक्षा के लिये दिशा निर्देश मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु, मूल्य-शिक्षा की प्रक्रिया-स्वान्वेषण, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	3. मानव की भागीदारी किस प्रकार तय हो सकती है|
4	**अध्याय-2: स्व-अन्वेषण - मूल्य शिक्षा की प्रक्रिया-** पुनरावृति, स्व-अन्वेषण क्या है?, स्वयं में संवाद, स्व-अन्वेषण के लिये विषय-वस्तु	१. यह एक निश्चित वास्तविकता है, जो समय, स्थान और व्यक्ति के साथ परिवर्तित नहीं होती है। यह स्वाभाविक, अपरिवर्तनीय और सार्वभौम है। हममें से प्रत्येक में संबंध, व्यवस्था और सह-अस्तित्व के लिये सहज-स्वीकृति है ही।
5	स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया, सहज-स्वीकृति की समझना - सही समझ का आधार	२. जब, "जैसा मैं हूँ" (मेरी इच्छा, विचार और आशा) और मेरी सहज-स्वीकृति में संगीत (Harmony) होता है, तो मैं सुख की स्थिति में होता हूँ। जब इन दोनों के बीच में अंतर्विरोध होता है, तो मैं अव्यवस्था और दुःख की स्थिति में होता हूँ। 3.स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया का परिणाम सही-समझ के विकास के रूप में आता है।
6	वर्तमान स्थिति का अवलोकन, आगे का मार्ग, स्व-अन्वेषण के प्रमुख आशय, प्रमुख बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	4. स्वयं में व्यवस्थित होकर बाहर की शेष-दुनिया के साथ व्यवस्था में रहना ही निरंतर सुख है, जो कि मानव की मूल चाहना है। इसके लिये स्व-अन्वेषण, एक आवश्यक प्रारंभिक बिंदु है।
7	**अध्याय-3:मानव की मूल चाहना एवं उसकी पूर्ति-** पुनरावृत्ति, मूल चाहना का क्या अर्थ है?, मानव की मूल चाहना- सुख समृद्धि और उसकी निरंतरता, मानव की मूल चाहना की पूर्ति के लिये आधारभूत आवश्यकतायें	१. मानव की मूल चाहना निरंतर सुख और समृद्धि की स्थिति में होना है। जिनको हम निरंतर बनाये रखना चाहते हैं, बिना किसी अन्तराल (break) के।
8	सही-समझ, संबंध और सुविधा - यह तीनों ही मानव की तृप्ति के लिये आवश्यक हैं, वरीयता- सही समझ, संबंध और सुविधा	२. मानव की मूल चाहना की पूर्ति के लिये तीनों ही आवश्यक हैं: स्वयं में सही-समझ, मानव के साथ संबंधों का निर्वाह, शेष-प्रकृति के साथ भौतिक सुविधा, इसी वरीयता क्रम में। 3. संबंधों के निर्वाह से (मानव के साथ) उभय-सुख होता है और भौतिक सुविधा (शेष-प्रकृति के साथ) की पूर्ति से उभय-समृद्धि होती है।
9	मानव चेतना का विकास, समग्र विकास, शिक्षा-संस्कार की भूमिका, प्रमुख बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	4. शिक्षा-संस्कार के द्वारा प्रत्येक बच्चे में सही-समझ सुनिश्चित करना होगा तथा दूसरे मानव के साथ संबंध पूर्वक जीने की योग्यता और साथ ही साथ समृद्धि के भाव को सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक सुविधा की पहचान और उससे अधिक का अवर्तानशील विधि से उत्पादन करने का कौशल एवं अभ्यास भी विकसित करना होगा।

10	**<u>अध्याय-4: सुख और समृद्धि को समझना- इनकी निरंतरता एवं पूर्ति के लिये कार्यक्रम-</u>** पुनरावृत्ति, सुख के अर्थ को समझना	१. ऐसी स्थिति/परिस्थिति जिसमें संगीत/व्यवस्था है, उस स्थिति/परिस्थिति में जीना मुझे सहज स्वीकार्य होता है। इस संगीत/व्यवस्था की स्थिति में जीना ही सुख है। २. ऐसी स्थिति/परिस्थिति जिसमें अंतर्द्वंद/अव्यवस्था हो, उस स्थिति/परिस्थिति में जीना मुझे सहज स्वीकार्य नहीं होता है। इस अंतर्द्वंद/अव्यवस्था की स्थिति में जीने के लिये बाध्य होना ही दुख है।
11	निरंतर सुख के लिये कार्यक्रम, समृद्धि के अर्थ को समझना	3. हम व्यक्ति के रूप में, परिवार के एक सदस्य के रूप में, समाज के एक सदस्य के रूप में और प्रकृति/अस्तित्व की एक इकाई के रूप में जीते हैं। यह हमारे जीने का सम्पूर्ण फैलाव है। 4. समृद्धि के लिये निम्न दोनों आवश्यक हैं- भौतिक वस्तुओं की आवश्यकता की पहचान उनकी सही मात्रा के साथ और आवश्यकता से अधिक भौतिक सुविधा की उपलब्धता/उत्पादन को सुनिश्चित करना।
12	सुख की प्रचलित मान्यताओं पर एक दृष्टि, सुख, आवेश के जैसा नहीं है, सुख के अन्य प्रचलित अभिप्राय, सुख के लिये किये गये विभिन्न प्रयासों का परीक्षण, सुख के लिये कार्यक्रम, कार्यक्रम का सहज निष्कर्ष, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	निरंतर सुख को सुनिश्चित करने के लिये कार्यक्रम इस प्रकार है: सभी स्तरों पर व्यवस्था को समझना और जीना
13	**<u>अध्याय-5: मानव को स्वयं और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में समझना-</u>** पुनरावृत्ति, 'स्वयं(मैं)' और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में मानव, 'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें, आवश्यकता- क्या ये सामयिक हैं या निरंतर?	१.मानव, चैतन्य इकाई अर्थात् 'स्वयं(मैं)' और जड़ इकाई अर्थात् 'शरीर' का सह-अस्तित्व है। ये दोनों एक दूसरे के साथ सह-अस्तित्व में हैं।
14	आवश्यकता- मात्रात्मक और गुणात्मक, 'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति, 'स्वयं(मैं)' की आवश्यकतायें निश्चित हैं, 'स्वयं(मैं)' और शरीर की क्रियायें	२. 'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें अलग-अलग प्रकार की हैं। किसी एक के पूरा होने से दूसरे की पूर्ति नहीं हो सकती। 'स्वयं(मैं)' की आवश्यकता सुख है, जो गुणात्मक एवं निरंतर है। शरीर की आवश्यकता भौतिक-सुविधा है, जो मात्रात्मक एवं सामयिक है।
15	'स्वयं(मैं)' और शरीर की अनुक्रिया, 'स्वयं(मैं)', चैतन्य इकाई और शरीर, जड़ इकाई के रूप में, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	शरीर की अनुक्रिया निश्चित है, यह पहचानने और निर्वाह-करने के रूप में है। 'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें अलग-अलग प्रकार की हैं। किसी एक के पूरा होने से दूसरे की पूर्ति नहीं हो सकती।
16	**<u>अध्याय-6: स्वयं में व्यवस्था- 'स्वयं(मैं)' को समझना-</u>** पुनरावृत्ति, 'स्वयं(मैं)' की क्रियायें, 'स्वयं(मैं)' की क्रियायें निरंतर हैं	१.मानव के केंद्र में, 'स्वयं(मैं)' है। प्रत्येक निर्णय 'स्वयं(मैं)' के द्वारा ही लिया जाता है और यदि आवश्यक होता है तो 'शरीर' को एक यंत्र की तरह उपयोग करके उस निर्णय को परस्परता में अभिव्यक्त किया जाता है।
17	क्रियाओं का संयुक्त रूप - कल्पनाशीलता, कल्पनाशीलता की अभिव्यक्ति व्यवहार और कार्य में, कल्पनाशीलता की स्थिति	२,स्वयं(मैं)' अपनी चित्रण, विश्लेषण-तुलन, चयन-आस्वादन में निरंतर क्रियाशील रहता है।
18	कल्पनाशीलता के संभावित स्रोत- मान्यता, संवेदना और सहज-स्वीकृति, तीनों स्रोतों से प्रेरित कल्पनाशीलता के परिणाम – स्वतंत्रता या परतंत्रता? मुख्य बिंदु	'स्वयं(मैं)' में इच्छा-शक्ति निरंतर बनी रहती है, इसीलिये चित्रण की क्रिया सदैव चलती रहती है। इसमें विचार-शक्ति निरंतर बनी रहती है, इसीलिये तुलन के आधार पर विश्लेषण की क्रिया सदैव चलती रहती है। इसमें आशा-शक्ति निरंतर बनी रहती है, इसीलिये आस्वादन के आधार पर चयन की क्रिया सदैव चलती रहती है।
19	अभ्यास 1 स्टेप	3.ये सभी क्रियायें मिलकर कल्पनाशीलता कहलाती हैं। कल्पनाशीलता, 'स्वयं(मैं)' में निरंतर चलती ही रहती है।
20	स्टेप २,3,4, अपनी समझ को जाँचे	
21	**<u>अध्याय-7: 'शरीर' के साथ 'स्वयं(मैं)' की व्यवस्था - संयम और स्वास्थ्य को समझना</u>**	

22	**<u>अध्याय-8: परिवार मे व्यवस्था- मानव-मानव संबंधों में मूल्य-</u>** पुनरावृत्ति, मानव-मानव परस्परता में जीने की मूल इकाई-परिवार, परिवार में व्यवस्था का आधार - संबंधों में भाव, संबंधों को समझना	१.संबंध और व्यवस्था में जीने के लिये 'परिवार' मानवीय संगठन की मूल इकाई है। २. संबंधो में सही-सही निर्वाह के लिये संबंध को समझना आवश्यक है। संबंध को बिना समझे सिर्फ मानना के आधार पर इसका ठीक-ठीक निर्वाह सुनिश्चित नहीं किया जा सकता।
23	वर्तमान स्थिति का अवलोकन, आगे का मार्ग, संबंधों के बारे में महत्वपूर्ण बिन्दु, अपनी समझ को जाँचे	3. संबंध पहले से हैं ही। संबंध एक स्वयं(मैं1) और दूसरे स्वयं(मैं2) के बीच होता है। हम संबंधों में जुड़े हुये ही रहते हैं चाहे हम इन्हें पहचान पायें या न पहचान | परिवार में ज्यादातर दुख संबंधों में ठीक-ठीक निर्वाह न हो पाने के कारण है; भौतिक सुविधाओं की कमी के कारण कम है। संबंधों में मूल समस्या भावों के अभाव के कारण अधिक हैं, न कि भौतिक सुविधाओं की कमी के कारण। कोई भी भौतिक सुविधा, भाव के अभाव की पूर्ति नहीं कर सकती।
24	विश्वास- आधार मूल्य, चाहना और योग्यता में भेद	
25	चाहना पर विश्वास, विश्वास से संबंधित मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचें	
26	सम्मान- सही आँकलन, अपमान – अधिमूल्यन, अवमूल्यन और अमूल्यन	
27	सम्मान का न्यूनतम भाग – दूसरा मेरे जैसा है, भेद से उत्पन्न अपमान, सम्मान की संपूर्ण वस्तु - हमारी परस्पर-पूरकता	
28	स्नेह, सम्मान और स्नेह से संबंधित मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	संबंधों का आधार भाव हैं- एक स्वयं(मै1) में दूसरे स्वयं(मैं2) के लिये। भाव 'स्वयं(मैं)' में होते हैं न कि 'शरीर' में। संबंधो के निर्वाह में भाव ही मौलिक हैं।
29	**<u>अध्याय-9: समाज में व्यवस्था - सार्वभौमिक मानवीय व्यवस्था को समझना;</u>** **<u>अध्याय-10: प्रकृति में व्यवस्था – अंर्तसंबंध, स्व-नियंत्रण और परस्पर-पूरकता को समझना;</u>** **<u>अध्याय-11: अस्तित्व में व्यवस्था - विभिन्न स्तरों पर सह-अस्तित्व को समझना</u>**	
30	सार-संक्षेप	

कक्षा १० का पाठ्यक्रम

सत्र	विषय	अभ्यास पुस्तिका के लिए बिंदु
1	**अध्याय *1 :* मूल्य-शिक्षा को समझना.** तृप्ति-पूर्वक जीना, तृप्ति-पूर्वक जीने के लिये शिक्षा , मूल्य-शिक्षा, कौशल-शिक्षा,मूल्य एवं कौशल की परस्पर-पूरकता, कौशल से अधिक, मूल्य की वरीयता (कक्षा 9 का सारांश)	1. हम सभी तृप्ति-पूर्ण, व्यवस्थित जीवन जीना चाहते हैं और उसी के लिये कार्य कर रहे हैं। 2.किसी वस्तु का मूल्य बड़ी व्यवस्था में उसकी भागीदारी है, जिसका कि वह हिस्सा है। 3.मूल्य-शिक्षा, शिक्षा का वह हिस्सा है जो मानव की बड़ी व्यवस्था में भागीदारी की समझ और वैसा ही जीने को सुनिश्चित करता है।
2	मूल्य-शिक्षा की आवश्यकता और उसके प्रमुख आशय का महत्व, समग्र दृष्टि के साथ जीने के लिये कार्यक्रम की स्पष्टता, मूल्य-शिक्षा के लिये दिशानिर्देश -सार्वभौम, तर्कसंगत, स्वाभाविक और जाँचने योग्य, सर्व सम्मिलित, व्यवस्था को सुनिश्चित करने वाला, मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु, मूल्य-शिक्षा की प्रक्रिया- स्व-अन्वेषण, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	1. मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु के लिये आवश्यक है कि वह सार्वभौम, तार्किक, स्वाभाविक और जाँचने योग्य, सर्व-सम्मिलित एवं व्यवस्था को सुनिश्चित करने वाली हो। 2.नैतिकता, निश्चित मानवीय आचरण की अभिव्यक्ति है, मानव के व्यवहार, कार्य, और बड़ी व्यवस्था में उसकी भागीदारी के रूप में, जो स्वयं और शेष-प्रकृति के बारे में हमारी समझ का परिणाम है। 3.मानव में नैतिक योग्यता के विकास से व्यावसायिक नैतिकता सुनिश्चित होती है।
3	**अध्याय-2 : स्व-अन्वेषण - मूल्य शिक्षा की प्रक्रिया.** स्वयं में संवाद, स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया, सहज-स्वीकृति की - सही समझ का आधार, स्व-अन्वेषण के प्रमुख आशय (कक्षा 9 का सारांश)	1.स्वान्वेषण, मानवीय मूल्यों को समझने की प्रक्रिया है 2. सहज-स्वीकृति प्रत्येक मानव के अंदर की स्वाभाविक क्षमता है. 3. स्वान्वेषण, स्वयं में संवाद की एक प्रक्रिया है
4	**अध्याय-3:मानव की मूल चाहना एवं उसकी पूर्ति,** मानव की मूल चाहना- सुख समृद्धि और उसकी निरंतरता, मानव की मूल चाहना की पूर्ति के लिये आधारभूत आवश्यकतायें, वरीयता- सही समझ, संबंध और सुविधा, मानव चेतना का विकास, समग्र विकास, शिक्षा-संस्कार की भूमिका	1. प्रत्येक मानव की मूल चाहना- सुख समृद्धि और उसकी निरंतरता है 2. मानव की मूल चाहना की पूर्ति के लिये तीनों ही आवश्यक हैं: स्वयं में सही-समझ, मानव के साथ संबंधों का निर्वाह, शेष-प्रकृति के साथ भौतिक सुविधा 3. मात्र भौतिक सुविधा के आधार पर ही जीने से मानव में तृप्ति नहीं होती 4. मानव के साथ संबंधों के निर्वाह से उभय-सुख होता है 5. भौतिक सुविधा (शेष-प्रकृति के साथ) की पूर्ति से उभय-समृद्धि होती है। 6. सही-समझ, संबंध और सुविधा इन तीनों के साथ इसी वरीयता क्रम में जीने से, मानव में तृप्ति होती है।
5	**अध्याय-4 : सुख और समृद्धि को समझना- इनकी निरंतरता एवं पूर्ति के लिये कार्यक्रम** पुनरावृत्ति, सुख के अर्थ को समझना, निरंतर सुख के लिये कार्यक्रम, समृद्धि के अर्थ को समझना, सुख की प्रचलित मान्यताओं पर एक दृष्टि	1. हम सभी के लिए सुख महत्वपूर्ण है व हमारे सारे प्रयास सुख के लिए है 2. जिस स्थिति/ परिस्थिति में मुझ में संगीत या व्यवस्था है वह स्थिति सुख है - सुख अर्थात व्यवस्था (Harmony). 3. ऐसी स्थिति / परिस्थिति में रहने के लिये बाध्य होना, जो मुझे सहज स्वीकार्य नहीं है, यही दुख है (unhappiness) 4. सुख आवेश से भिन्न है

6	सुख के अन्य प्रचलित अभिप्राय, सुख के लिये किये गये विभिन्न प्रयासों का परीक्षण, सुख के लिये कार्यक्रम, कार्यक्रम का सहज निष्कर्ष, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	1. समृद्धि के लिये निम्न दोनों आवश्यक हैं- भौतिक वस्तुओं की आवश्यकता की पहचान उनकी सही मात्रा के साथ और आवश्यकता से अधिक भौतिक सुविधा की उपलब्धता/उत्पादन को सुनिश्चित करना। 2. समृद्ध व्यक्ति सदुपयोग और दूसरे व्यक्तियों के पोषणकी सोचता है, जबकि दरिद्र व्यक्ति संग्रह और दूसरे व्यक्तियों के शोषणकी ही सोचता है।3. सुख और समृद्धि की प्रचलित मान्यता – (i) शरीर के द्वारा मिलने वाले अनुकूल संवेदना से (ii) दूसरों के द्वारा मिलने वाले अनुकूल भावसे। (iii) समृद्धि को भौतिक सुविधाओं का संग्रह मानना 6. इस प्रकार की मान्यताओं ने मानव और शेष-प्रकृति के शोषण को ही बढ़ावा दिया है। इसके प्रभाव को हम स्पष्टरूप से मानव में संघर्ष एवं युद्ध के रूप में तथा शेष-प्रकृति में प्राकृतिक संसाधनों के अभाव एवं प्रदूषण के रूप में देख सकते हैं।
7	**<u>अध्याय-5 : मानव को स्वयं और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में समझना</u>** मानव - 'स्वयं(मैं)' और 'शरीर' का सह-अस्तित्व, स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें**, '**स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति, स्वयं(मैं)' और शरीर की क्रियायें, 'स्वयं(मैं)' और शरीर की अनुक्रिया,स्वयं(मैं)', चैतन्य इकाई और शरीर, जड़ इकाई के रूप में	1.मानव, चैतन्य इकाई अर्थात् 'स्वयं(मैं)' और जड़ इकाई अर्थात् 'शरीर' का सह-अस्तित्व है। 'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें अलग-अलग प्रकार की हैं। 2. 'स्वयं(मैं)' की आवश्यकता की पूर्ति सही-समझ और सही-भाव से की जा सकती है, जबकि शरीर की आवश्यकता की पूर्ति भौतिक-रासायनिक वस्तुओं से की जा सकती है।
8	मुख्य भ्रम - मानव को केवल शरीर मानना, मानव के केंद्र में 'स्वयं(मैं)' है, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	1. मानव को केवल शरीर मानना ही मुख्य भ्रम है और इसी कारण सभी तरह की आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास केवल भौतिक-सुविधाओं से करते हैं। 2. मानव में व्यवस्था का अर्थ, 'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति को सुनिश्चित करना एवं 'स्वयं(मैं)' और शरीर के बीच व्यवस्था को सुनिश्चित करना है।
9	**<u>अध्याय-6 : स्वयं में व्यवस्था- 'स्वयं(मैं)' को समझना-</u>** 'स्वयं(मैं)' की क्रियायें, कल्पनाशीलता की स्थिति, कल्पनाशीलता के संभावित स्रोत-मान्यता, संवेदना और सहज-स्वीकृति, तीनों स्रोतों से प्रेरित कल्पनाशीलता के परिणाम – स्वतंत्रता या परतंत्रता?	1. कल्पनाशीलता को प्रेरित करने वाले तीन संभावित स्रोत हैं- मान्यतायें, संवेदनायें और सहज-स्वीकृतियाँ। 2. जब कल्पनाशीलता सहज-स्वीकृति के अनुरूप होती है, केवल तभी इसमें निश्चितता होती है और यह 'स्वयं(मैं)' में संगीत की तरफ बढ़ती है और जब यह मान्यताओं या संवेदनाओं के द्वारा प्रेरित होती है, तो इसमें अनिश्चितता होती है और अंतर्द्वंद या अव्यवस्था की तरफ बढ़ती है।
10	आगे का मार्ग - स्व-अन्वेषण के माध्यम से 'स्वयं(मैं)' में व्यवस्था सुनिश्चित करना, 'स्वयं(मैं)' में व्यवस्था को विस्तार से समझना, मुख्य बिंदु	1.संस्कार वो 'स्वीकृतियां' हैं जो हमारी सभी कल्पनाशीलताओं के योगफल से निर्धारित होती है। संस्कार= ∑ [इच्छा(सभी) + विचार(सभी) + आशा(सभी)] से निर्धारित स्वीकार्यतायें हैं। समय के साथ इनमें नवीनीकरण होता रहता है किसी क्षण (t) पर एक तरह का संस्कार रहता है और अगले क्षण (t+1) पर हमारे संस्कारों में निम्नलिखित आधार पर परिवर्तन होता है: संस्कार(t+1) = संस्कार(t)+ वातावरण(t)+ अध्ययन(t) अगले क्षण के संस्कार सहज-स्वीकृति के अनुरूप हो भी सकते हैं और नहीं भी। यदि हम अपनी सहज-स्वीकृति के आधार पर स्व-अन्वेषण कर रहे हैं, तो इससे नवनिर्मित संस्कार सौहार्द पूर्ण होंगे अर्थात् संगीत में होंगे और व्यवस्था में होंगे।
11	**<u>अभ्यास 1 स्वयं के द्वारा स्वयं को देखना</u>** **पु**नरावृत्ति: पिछली कक्षा में आपने ये अभ्यास किया **<u>(Recap Step 1-4)</u>**	

12	आगे का अभ्यास 1 - step 5 and 6 निर्णय का आधार, सही / सहज भाव को सुनिश्चित करने के लिए सही समझ की आवश्यकता	
13	आगे का अभ्यास 1 - step 6 & 7 सही / सहज भाव को सुनिश्चित करने के लिए सही समझ की आवश्यकता, सही समझ की आवश्यकता, अपनी समझ को जाँचे	
14	**<u>अध्याय-7 : 'शरीर' के साथ 'स्वयं(मैं)' की व्यवस्था - स्वास्थ्य और संयम को समझना</u>** 'स्वयं(मैं)' दृष्टा-कर्ता-भोक्ता के रूप में ('शरीर' एक यंत्र के रूप में), 'शरीर' एक स्व-व्यवस्थित प्रणाली और 'स्वयं(मैं)' के एक यंत्र के रूप में	1. मानव के अस्तित्व के केंद्र में 'स्वयं(मैं)' ही है। यही दृष्टा है अर्थात् जो समझने वाला है; यही कर्ता है अर्थात् जो निर्णय लेने वाला है; यही भोक्ता है या भोगने वाला है अर्थात् जो सुख या दुख महसूस करता है। 'स्वयं(मैं)' की आवश्यकता निरंतर सुख है, जो कि सभी स्तरों अर्थात् मानव, परिवार, समाज, और प्रकृति/ अस्तित्व में व्यवस्था को समझने और व्यवस्था में जीने से सुनिश्चित होता है।
15	'स्वयं(मैं)' की 'शरीर' के साथ व्यवस्था, वर्तमान स्थिति का अवलोकन, आगे का मार्ग	
16	स्वास्थ्य एवं संयम के लिये कार्यक्रम, 'स्वयं(मैं)' और 'शरीर' के बीच व्यवस्था के प्रकाश में समृद्धि,	शरीर' एक स्व-व्यवस्थित, जड़ इकाई है, जिसका उपयोग 'स्वयं(मैं)' यंत्र या उपकरण के रूप में करता है। इस स्पष्टता के साथ 'स्वयं(मैं)', 'शरीर' के पोषण, संरक्षण और सदुपयोग की जिम्मेदारी को स्वीकारता है। जिम्मेदारी का यही भाव, संयम का भाव कहलाता है।
17	मेरे 'स्वयं(मैं)' और मेरे 'शरीर' के प्रति मेरी भागीदारी (मूल्य), मुख्य बिंदु	1. संयम और स्वास्थ्य के लिये निम्नलिखित कार्यक्रम हैं- 1a. आहार 1b. विहार 2a. श्रम 2b. व्यायाम 3a. आसन 3b. प्राणायाम 4a. औषधि 4b. चिकित्सा
18	**अभ्यास 2 -** मैं (चैतन्य) के द्वारा मैं (चैतन्य) को देखना शरीर को देखना मैं (चैतन्य) और शरीर के बीच होने वाले आदान-प्रदान को देखना (Step 1-3), अभ्यास 2 Step 4: मैं (चैतन्य) और शरीर के बीच दूरी है- इस को देखना	
19	अभ्यास 2 step 5 बाहर की घटना का, शरीर का प्रभाव तथा मेरा निर्वाह, अभ्यास 2 Step 6A: मान्यता आधारित संस्कार - प्रतिक्रिया पूर्वक जीना, परतंत्रता,	
20	अभ्यास 2 Step 6B: समझ आधारित संस्कार - जिम्मेदारी पूर्वक जीना, स्वतंत्रता, Recap of Step 1-6	
21	अभ्यास 2: step 7 मेरा होना, शरीर का होना शून्य में, शून्य के सह-अस्तित्व में, अपनी समझ को जाँचे	
22	**<u>अध्याय 8(अ): मानव-मानव संबंधों मे मूल्य-</u>** (Class 9 recap)- विश्वास, सम्मान, स्नेह**, ममता और वात्सल्य,**	1. ममता, अपने संबंधियों के शरीर के पोषण एवं संरक्षण के प्रति जिम्मेदारी एवं निष्ठा का भाव है। सीमित मात्रा में भौतिक सुविधा ममता के भाव की पूर्ति के लिये आवश्यक है। 2. वात्सल्य, अपने संबंधियों के 'स्वयं(मैं)' में सही-समझ और सही-भाव सुनिश्चित करने की जिम्मेदारी और निष्ठा का भाव है।

23	श्रद्धा, गौरव और कृतज्ञता, सम्मान, श्रद्धा, कृतज्ञता और गौरव का पुनरावलोकन, ममता, वात्सल्य, श्रद्धा, गौरव और कृतज्ञता से संबंधित मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	1. श्रद्धा, श्रेष्ठता की स्वीकृति का भाव है। श्रेष्ठता का अर्थ है जीने के सभी स्तरों (मानव, परिवार, समाज, प्रकृति/ अस्तित्व) में व्यवस्था को समझना एवं व्यवस्था में जीना अर्थात् निरंतर सुख पूर्वक जीना। 2. गौरव, जिन्होंने श्रेष्ठता के लिये प्रयास किया उनके प्रति भाव। भले ही ये व्यक्ति पूर्ण रूप में श्रेष्ठता को प्राप्त न कर सकें हों। 3. कृतज्ञता, जिन्होंने मेरी श्रेष्ठता के लिये प्रयास किया है उनके प्रति भाव। इस प्रक्रिया में उन्होंने मेरे साथ सही-समझ का प्रस्ताव साझा किया हो या सही-भाव मुझ तक संचारित किया हो या आवश्यक भौतिक सुविधा उपलब्ध कराई हो।
24	अध्याय 8(ब): मानव-मानव संबंधों मे पूर्ण मूल्य-प्रेम, प्रेम- पूर्ण मूल्य, प्रेम के भाव की अभिव्यक्ति, प्रेम –पूर्ण मूल्य के रूप मे, प्रेम और आसक्ति के बीच अंतर,	1. प्रेम, सभी के लिये संबंध की स्वीकृति का भाव है। 2. प्रेम के बारे में सामान्य भ्रम यह है कि ये संवेदना अर्थात् इंद्रिय सुख पर आधारित है; और वास्तव में यह केवल मोह अर्थात् आसक्ति है।
25	**<u>अध्याय 8(ब): मानव-मानव संबंधों मे पूर्ण मूल्य-प्रेम,</u>** प्रेम- पूर्ण मूल्य, प्रेम के भाव की अभिव्यक्ति, प्रेम –पूर्ण मूल्य के रूप मे, प्रेम और आसक्ति के बीच अंतर, सही भाव- स्वयं के आधार पर या दूसरे से?, संबंध के निर्वाह में भौतिक-सुविधाओं की भूमिका, न्याय की समझ, मेरे परिवार में मेरी भागीदारी (मूल्य), मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	
26	***<u>अध्याय-9 :</u>*** **<u>समाज में व्यवस्था - सार्वभौमिक मानवीय व्यवस्था को समझना.</u>** मानव लक्ष्य को समझना, वर्तमान स्थिति का अवलोकन,	
27	मानवीय व्यवस्था: मानव लक्ष्य और इनकी पूर्ति के आयाम, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	
28	**<u>अध्याय-10 : प्रकृति में व्यवस्था – अंर्तसंबंध, स्व-नियंत्रण और परस्पर-पूरकता को समझना</u>** पुनरावृत्ति, इकाइयों के समूह के रूप में प्रकृति, इकाइयों का चार अवस्थाओं में वर्गीकरण, चारों अवस्थाओं के बीच अंर्तसंबंध और परस्पर-पूरकता	
29	**<u>अध्याय-10 : प्रकृति में व्यवस्था – अंर्तसंबंध, स्व-नियंत्रण और परस्पर-पूरकता को समझना.</u>** प्रकृति में स्व-नियंत्रण, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे **<u>अध्याय-11: अस्तित्व में व्यवस्था - विभिन्न स्तरों पर सह-अस्तित्व को समझना</u>**	
30	**सार संक्षेप**	
नोट	***1** (इन बिंदुओं के संदर्भ मे आपने क्या जांचा/ जाँचना है, क्या समझा है /समझना है और क्या आपके जीने मे आया/ आना है, इसकी जांच-परख। इसके अतिरिक्त अभ्यास कार्य, गतिविधियां (activities), परियोजनाएं (projects) भी दिया जा सकता है) जीने का मतलब समझ, भाव, विचार, व्यवहार, कार्य	

कक्षा ११ का पाठ्यक्रम

सत्र	विषय	अभ्यास पुस्तिका के लिए बिंदु
1	**<u>अध्याय 1 : मूल्य-शिक्षा को समझना</u>** तृप्ति-पूर्वक जीना, तृप्ति-पूर्वक जीने के लिये शिक्षा, मूल्य-शिक्षा, कौशल-शिक्षा, मूल्य एवं कौशल की परस्पर-पूरकता, कौशल से अधिक, मूल्य की वरीयता मूल्य-शिक्षा की आवश्यकता और उसके प्रमुख आशय का महत्व, हमारे लक्ष्य की सही पहचान,समग्र- दृष्टि का विकास,वर्तमान समस्याओं का समाधान, नैतिक-योग्यता का विकास मूल्य-शिक्षा के लिये दिशा निर्देश, सार्वभौम,तर्कसंगत, स्वाभाविक और जाँचने योग्य,सर्व सम्मिलित, मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु,मूल्य-शिक्षा की प्रक्रिया स्व - अन्वेषण	• हम सभी तृप्ति-पूर्ण, व्यवस्थित जीवन जीना चाहते हैं और उसी के लिये कार्य कर रहे हैं। • किसी वस्तु का मूल्य बड़ी व्यवस्था में उसकी भागीदारी है, जिसका कि वह हिस्सा है। • मूल्य-शिक्षा, शिक्षा का वह हिस्सा है जो मानव की बड़ी व्यवस्था में भागीदारी की समझ और वैसा ही जीने को सुनिश्चित करता है।
2	**<u>अध्याय-2 :स्व-अन्वेषण -मूल्य शिक्षा की प्रक्रिया</u>** पुनरावृत्ति स्व-अन्वेषण क्या है?, स्वयं में संवाद, स्व-अन्वेषण के लिये विषय-वस्तु, स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया, सहज-स्वीकृति की समझना -सही समझ का आधार स्व-अन्वेषण के प्रमुख आशय	• मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु के लिये आवश्यक है कि वह सार्वभौम, तार्किक, स्वाभाविक और जाँचने योग्य, सर्व-सम्मिलित एवं व्यवस्था को सुनिश्चित करने वाली हो। • मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु में मानव के जीने के सभी स्तर एवं मानव के जीने के सभी आयाम सम्मिलित हों। • नैतिकता, निश्चित मानवीय आचरण की अभिव्यक्ति है, मानव के व्यवहार, कार्य, और बड़ी व्यवस्था में उसकी भागीदारी के रूप में,और शेष-प्रकृति के बारे में हमारी समझ का परिणाम है।
3	**<u>अध्याय-3:मानवकी मूल चाहना एवं उसकी पूर्ति</u>** पुनरावृत्ति मूल चाहना का क्या अर्थ है?, मानव की मूल चाहना- सुख समृद्धि और उसकी निरंतरता, मानव की मूल चाहना की पूर्ति के लिये आधारभूत आवश्यकतायें, सही-समझ, संबंध और सुविधा-यह तीनों ही मानव की तृप्ति के लिये आवश्यक हैं, वरीयता- सही समझ, संबंध और सुविधा, मानव चेतना का विकास, समग्र विकास, शिक्षा-संस्कार की भूमिका	• स्व-अन्वेषण स्वयं में संवाद की एक प्रक्रिया है- "जैसा मैं हूँ" (मेरी इच्छा, विचार और आशा) और "जैसा होना मुझे सहज स्वीकार्य है" (मेरी सहज-स्वीकृति) के बीच। • जब मेरी (इच्छा, विचार और आशा) और मेरी सहज-स्वीकृति में संगीत (Harmony) होता है, तो मैं सुख की स्थिति में होता हूँ। जब इन दोनों के बीच में अंतर्विरोध होता है, तो मैं तो मैं अव्यवस्था और दुःख की स्थिति में होता हूँ।

4	**<u>अध्याय-4 : सुख और समृद्धि को समझना-इनकी निरंतरता एव पूर्ति के लिये कार्यक्रम</u>** पुनरावृत्ति सुख के अर्थ को समझना, निरंतर सुख के लिये कार्यक्रम, समृद्धि के अर्थ को समझना, सुख की प्रचलित मान्यताओं पर एक दृष्टि, सुख की निरंतरता,भौतिक सुविधाओं से, सुख की निरंतरता दूसरों के द्वारा मिलने वाले अनुकूल भाव से, सुख, उत्तेजना के जैसा नहीं है, सुख के अन्य प्रचलित अभिप्राय, सुख के लिये कार्यक्रम, कार्यक्रम का सहज निष्कर्ष	•सुख के अर्थ को समझना-""जिस स्थिति/परिस्थिति में मैं हूँ, यदि उसमें संगीत/व्यवस्था है, तो उस स्थिति/परिस्थिति में जीना मुझे सहज स्वीकार्य होता है""। ऐसी स्थिति/परिस्थिति में जीना, जो मुझे सहज स्वीकार्य है, यही सुख है। •निरंतर सुख के लिये कार्यक्रम-सुख की निरंतरता के लिये हमारा जीने के सभी स्तरों पर व्यवस्था को सुनिश्चित करना आवश्यक है। हमारा जीना निम्नलिखित चार स्तरों पर होता ही है: 1. व्यक्ति के रूप में- मानव/व्यक्तिगत रूप में 2. परिवार के एक सदस्य के रूप में 3. समाज के एक सदस्य के रूप में 4. प्रकृति/अस्तित्व की एक इकाई के रूप में •समृद्धि के अर्थ को समझना -आवश्यकता से अधिक भौतिक सुविधाओं के उत्पादन या उपलब्धता का भाव समृद्धि है।
5	**<u>अध्याय-5 :मानव को स्वयं और शरीर के सह-अस्तित्व के रूपमें समझना</u>** पुनरावृत्ति 'स्वयं(मैं)'और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में मानव, 'स्वयं(मैं)'और शरीर की आवश्यकतायें, आवश्यकता- क्या ये सामयिक हैं या निरंतर?, आवश्यकता- मात्रात्मकऔर गुणात्मक, 'स्वयं(मैं)'और शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति, 'स्वयं(मैं)'कीआवश्यकतायें निश्चित हैं, 'स्वयं(मैं)'और शरीर की क्रियायें, 'स्वयं(मैं)', चैतन्य इकाई और शरीर, जड़ इकाई के रूप में, मुख्य भ्रम- मानव को केवल शरीर मानना, मानव के केंद्र में 'स्वयं(मैं)' है	•स्वयं(मैं)' और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में मानव-प्रस्ताव यह है कि मानव, 'स्वयं(मैं)' और शरीर का सह-अस्तित्व है। •'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें -'स्वयं(मैं)' और शरीर अलग-अलग हैं,इसे इनकी आवश्यकताओं के आधार पर समझा जा सकता है •स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें की पूर्ति-शरीर से जुड़ी हुई सभी आवश्यकताएं, भौतिक सुविधा के रूप में हैं, जिनकी पूर्ति किन्हीं भौतिक-रासायनिक वस्तुओं के द्वारा ही हो सकती है। •'स्वयं(मैं)' से जुड़ी हुई सभी आवश्यकताएं भाव के रूप में हैं, जिनकी पूर्ति सही-समझ और सही-भाव के द्वारा ही हो सकती है।

6	**<u>अध्याय-6 : स्वयं में व्यवस्था- 'स्वयं(मैं)' को समझना पुनरावृत्ति</u>** 'स्वयं(मैं)' की क्रियायें, 'स्वयं(मैं)' की क्रियायें निरंतर हैं, क्रियाओं का संयुक्त रूप - कल्पनाशीलता, कल्पनाशीलता की अभिव्यक्ति व्यवहार और कार्य में, कल्पनाशीलता की स्थिति, कल्पनाशीलता के संभावित स्रोत-मान्यता, संवेदना और सहज-स्वीकृति, कल्पनाशीलता के प्रेरित होने के स्रोत के रूप में मान्यतायें, कल्पनाशीलता को प्रेरित करने के स्रोत के रूप में संवेदना, कल्पनाशीलता को प्रेरित करने वाली सर्वाधिक प्रामाणिक स्रोत सहज-स्वीकृति, तीनों स्रोतों से प्रेरित कल्पनाशीलता के परिणाम –स्वतंत्रता या परतंत्रता?, आगे का मार्ग-स्व-अन्वेषण के माध्यम से 'स्वयं(मैं) 'में व्यवस्था सुनिश्चित करना, 'स्वयं(मैं)' में व्यवस्था को विस्तार से समझना,	•'स्वयं(मैं)' की क्रियायें-स्वयं(मैं)' की क्रियाओं से आशय हमारी कल्पनाशीलता, हमारी निर्णय लेने की क्रिया, हमारी इच्छा, हमारे विचार, हमारी आशा इत्यादि से है। •क्रियाओं का संयुक्त रूप - कल्पनाशीलता-'स्वयं(मैं)' में जो कुछ भी चल रहा है; उसे संयुक्त रूप में आसानी से देख सकते हैं; जिसे कल्पनाशीलता कह रहे हैं। कोई न कोई कल्पनाशीलता तो हर समय हम में चलती ही रहती है । •कल्पनाशीलता को प्रेरित करने वाले तीन संभावित स्रोत हैं-मान्यता, संवेदनायें और सहज-स्वीकृतियाँ। •तीनों स्रोतों से प्रेरित कल्पनाशीलता के परिणाम – स्वतंत्रता या परतंत्रता?जब कल्पनाशीलता, मान्यता या संवेदना के द्वारा प्रेरित होती है तो यह किसी बाह्य स्रोत के अधीन रहती है, यही परतंत्रता है। जब कल्पनाशीलता, सहज-स्वीकृति के द्वारा निर्देशित होती है तो यही 'स्वयं(मैं)' में संगीत की स्थिति है, यही स्वतंत्रता है।
7	**<u>अध्याय-7 : 'शरीर'केसाथ'स्वयं(मैं)'कीव्यवस्था - स्वास्थ्यऔर संयमको समझना</u>** **'**स्वयं (मैं) 'द्दष्टा-कर्ता-भोक्ता के रूप में ('शरीर 'एक यंत्र के रूप में), मैं द्दष्टा हूँ, मैं कर्ता हूँ, मैं भोक्ता हूँ (भोगने वाला), 'स्वयं (मैं)' द्दष्टा, कर्ता, भोक्ता है, 'शरीर' एक स्व-व्यवस्थित प्रणाली और'स्वयं(मैं) 'के एक यंत्र के रूप में, 'स्वयं (मैं)'की 'शरीर' के साथ व्यवस्था, आगे का मार्ग, स्वास्थ्य एवं संयम के लिये कार्यक्रम, 'शरीर' का पोषण, 'शरीर' की सुरक्षा, 'शरीर' का सदुपयोग, 'स्वयं (मैं)'और'शरीर' के बीच व्यवस्था के प्रकाश में समृद्धि का पुनरावृत्ति, मेरे'स्वयं(मैं)'और मेरे 'शरीर'के प्रति मेरी भागीदारी (मूल्य)	• मानव के केंद्र में, 'स्वयं(मैं)'है। प्रत्येक निर्णय 'स्वयं(मैं)' के द्वारा ही लिया जाता है और यदि आवश्यक होता है तो 'शरीर' को एक यंत्र की तरह उपयोग कर के उस निर्णय को परस्परता में अभिव्यक्त किया जाता है। • मानव के अस्तित्व के केंद्र में 'स्वयं(मैं)' ही है।यही द्दष्टा है अर्थात् जो समझने वाला है; यही कर्ता है अर्थात् जो निर्णय लेने वाला है; यही भोक्ता है या भोगने वाला है अर्थात् जो सुख या दुख महसूस करता है। • शरीर'एक स्व-व्यवस्थित, जड़ इकाई है,जिसका उपयोग 'स्वयं(मैं)' यंत्र या उपकरण के रूप में करता है। और'स्वयं(मैं)','शरीर'के पोषण, संरक्षण, सदुपयोग की जिम्मेदारी को स्वीकारता है।जिम्मेदारी का यही भाव,संयम का भाव कहलाता है। • संयम के भाव के साथ 'स्वयं(मैं)', 'शरीर' के साथ व्यवस्था को सुनिश्चित करने के योग्य हो पाता है जिससे 'शरीर'में स्वास्थ्य सुनिश्चित होता है • भौतिक-सुविधा 'शरीर'की आवश्यकता है, इसलिये भौतिक-सुविधा का उत्पादन, संरक्षण और सदुपयोग (स्वयं के लक्ष्य की पूर्ति हेतु) मानव के कार्यक्रम का एक भाग है।
	<u>अध्याय 8: परिवार मे व्यवस्था- मानव-मानव संबंधों में मूल्य को समझना</u>	

8	मानव-मानव परस्परता में जीने की मूल इकाई-परिवार, परिवार में व्यवस्था का मानव-मानव संबंधों में आधार मूल्य- विश्वास, सम्मान- सही -आंकलन, सम्मान- सही -आंकलन,सम्मान की संपूर्ण विषय-वस्तु-हमारी परस्पर-पूरकता, सम्मान से संबंधित मुख्य बिंदु	• संबंध पहले से हैं ही। संबंध एक स्वयं(मैं1) और दूसरे स्वयं(मैं2) के बीच होता है। हम संबंधों में जुड़े हुये ही रहते हैं चाहे हम इन्हें पहचान पायें या न पहचान पायें। जब हम संबंधों को पहचान पाते हैं तो इनको स्वीकार भी पाते हैं और इनके निर्वाह के बारे में सोच भी पाते हैं। • संबंधों का आधार भाव हैं- एक स्वयं(मै1) में दूसरे स्वयं(मैं2) के लिये। भाव 'स्वयं(मैं)' में होते हैं न कि 'शरीर' में। संबंधो के निर्वाह में भाव ही मौलिक हैं। • जब हम 'स्वयं(मैं)' में इन सहज-स्वीकार्य भावों को सुनिश्चित कर पाते हैं; दूसरे से साझा कर पाते हैं; और • इन भावों का सही-सही मूल्यांकन कर पाते हैं तब उभय-सुख सुनिश्चित होता है। संबंधों में सामान्यतः यह गलती होती रहती है कि हम अपना आंकलन अपने चाहना के आधार पर करते हैं और दूसरों का आंकलन उनकी योग्यता के आधार पर करते हैं। ऐसा करते हुये हम यह मान लेते हैं कि हम अच्छे व्यक्ति हैं और समस्यायें तो दूसरों में है। • जब मैं 'स्वयं(मैं)' की केन्द्रीय भूमिका को देख पाता हूँ, तो अपने साथ-साथ दूसरे का भी मूल्यांकन 'स्वयं' के आधार पर ही करता हूँ, न कि शरीर, सुविधा या मान्यता के आधार पर।
9	मानव-मानव संबंधों में मूल्य- स्नेह, ममता और वात्सल्य,मानव-मानव संबंधों में मूल्य-श्रद्धा, गौरव और कृतज्ञता,मानव-मानव संबंधों में पूर्णमूल्य-प्रेम,संबंध के निर्वाह में भौतिक-सुविधाओं की भूमिका,न्याय की समझ, प्रेम एवं न्याय की समझ से संबंधित मूल बिन्दु:	· ममता के भाव के अलावा, अन्य भावों के निर्वाह के लिये भौतिक सुविधा की आवश्यकता मात्र प्रतीकात्मक है (संबंधों में अधिकांश शिकायतें इन भावों के निर्वाह में होने वाली कमी के कारण हैं और कोई भी भौतिक सुविधा इस कमी की पूर्ति नहीं कर सकती)। • संबंधों को समझने के आधार पर जब भाव हममें सुनिश्चित होते हैं, तो वे बिना किसी शर्त निरंतरता में बने रहते हैं। जब भाव घटनाओं पर आधारित होते हैं तो उनमें निरंतरता नहीं हो पाती क्योंकि ये शर्तों पर आधारित होते हैं। नकारात्मक भाव मूलतः सही भाव अर्थात् सहज-स्वीकार्य भाव न होने के कारण आते हैं। • प्रेम के बारे में सामान्य भ्रम यह है कि ये संवेदना अर्थात् इंद्रिय सुख पर आधारित है; और वास्तव में यह केवल मोह अर्थात् आसक्ति है। • प्रेम का भाव अखंड-समाज का आधार है। प्रेम के भाव के साथ ही परिवार में न्याय सुनिश्चित हो पाता है एवं यही न्याय परिवार से शुरू होकर विश्व परिवार की तरफ अग्रसर हो पाता है जो अंततः अखंड-समाज के रूप में अभिव्यक्त होगा।
	<u>अध्याय-9 : समाज में व्यवस्था - सार्वभौमिक मानवीय व्यवस्था को समझना</u>	

10	, मानव लक्ष्य को समझना, मानवीय व्यवस्था: मानव लक्ष्य और इनकी पूर्ति के आयाम, मानवीय व्यवस्था के शिक्षा-संस्कार	· समाज एक साथ जीने वाले परिवारों का समूह है, जिनके लक्ष्य(मानव लक्ष्य) एक समान होते हैं। शिक्षा व्यवस्था की मुख्य जिम्मेदारी यह है, कि वह ऐसे लोगों को और समाज को मानवीय समाज के जीवित आदर्श के रूप में विकसित करे। यह एक सतत प्रक्रिया है। एक बार जब मानवीय समाज की समझ हो जाती है और यह समझ हममें स्थापित हो जाती है, तो यह अगली पीढ़ी के लिये मानवीय शिक्षा-संस्कार सुनिश्चित करने में सक्षम हो पाती है ·
11	स्वास्थ्य और संयम	संयम के भाव का अर्थ रोकना या नियंत्रण करना नहीं है बल्कि 'स्वयं(मैं)' में 'शरीर' के प्रति जिम्मेदारी को पहचानने और शरीर के लिये निम्न भावों को सुनिश्चित करने की निष्ठा है:● शरीर का पोषण● शरीर का संरक्षण● शरीर का सदुपयोग
12	समग्र मानव स्वास्थ्य,सार्वभौमिक/मूलभूत स्वास्थ्य सिद्धान्त	एक मूलभूत सिद्धान्त जो सभी मनुष्यों के लिए समान है (सार्वभौमिक है) यह है कि, प्रत्येक मनुष्य स्व (चैतन्य इकाई) और शरीर (भौतिक इकाई) का सह-अस्तित्व है।
13	"स्वास्थ्य के लिए अनुशंसाएँ, आहार (भोजन और पारंपरिक ज्ञान)	आहार(Intake)यह बात पहले पहले की गयी थी कि आहार में न केवल जो भोजन हम लेते हैं वह सम्मिलित है, बल्कि जल, वायु, सूर्य का प्रकाश/धूप इत्यादि भी आहार में सम्मिलित हैं। देखा जाये तो, हम शरीर की पांच इन्द्रियों के माध्यम से जो कुछ भी लेते हैं वे सभी हमारे आहार के अन्तर्गत आते हैं।
14	"दिनचर्या,शोधन प्रक्रियाएं	दिनचर्या(Daily Upkeep)5. प्रातःकाल जल्दी जागने से शरीर की आंतरिक क्रियात्मकताओं का समकालन होता है शरीर में स्वाभाविक रूप से होने वाली शोधन की कुछ प्रक्रियाएं नीचे दी गई हैं और हम इसमें शरीर की सहायता कर सकते हैं। यहाँ हम केवल पहली प्रक्रिया पर चर्चा करेंगे – - आंतों का शोधन - मौखिक गुहा का शोधन - नासिका का शोधन - नेत्रों का शोधन - पूर्ण शरीर का शोधन – स्नान
15	"दिनचर्या के संबंध में भोजन की अनुशंसायें	निद्रा का सही समय:सूर्योदय से पहले जागने में सक्षम होने के लिए आपको रात्रि में समय पर सोने की जरूरत है, हो सके तो रात 10 बजे तक।
16	"परिवार में स्वास्थ्य का कार्यान्वयन समाज में स्वास्थ्य का कार्यान्वयन	एक समूह के रूप में कई परिवार एक परिवार को उस समूह के सभी परिवारों के स्वास्थ्य की जिम्मेदारी लेने के लिए नामित कर सकते हैं। इसमें समूह के सभी परिवारों में स्वास्थ्य के विषय में जागरूकता भी सम्मिलित हो सकती है
17	उत्पादन-कार्य	उत्पादन-कार्य के संबंध में दो महत्वपूर्ण प्रश्न हैं:● क्या उत्पादन करना है?● कैसे उत्पादन करना है?

18	न्याय-सुरक्षा,विनिमय- कोष,मानवीय समाज में व्यवसाय	न्याय से समाज में अभय (विश्वास) सुनिश्चित होता है और सुरक्षा से प्रकृति के साथ सह-अस्तित्व सुनिश्चित होता है।विनिमय-कोष, जब परस्पर-पूरकता की दृष्टि से किया जाता है तो, वह समृद्धि सुनिश्चित करता है और समाज में अभय सुनिश्चित करने की प्रक्रिया में भी सहायक होता है।
19	सार्वभौम मानवीय व्यवस्था- परिवार व्यवस्था से विश्व परिवार व्यवस्था तक, क्षेत्र - "परिवारव्यवस्था से विश्व परिवार व्यवस्था-सार्वभौम मानवीय व्यवस्था "	हर मानव की अपनी एक योग्यता है और सामाजिक व्यवस्था में एक या एक से अधिक आयामों में उसकी भागीदारी है। सभी की सार्थक भागीदारी है, परिवार व्यवस्था में; परिवार व्यवस्था से परिवार समूह व्यवस्था में और इसी तरह बढ़ते हुये राष्ट्र परिवार व्यवस्था में और अंततः विश्व परिवार व्यवस्था में।
20	सही-समझ के सहज निष्कर्ष,समाज में मेरी भागीदारी (मूल्य)	समाज में मेरी भागीदारी (मूल्य), समाज के बारे में स्पष्टता एवं इसके लक्ष्यों, कार्यक्रमों और दायरे की स्पष्टता को विकसित करना है; और इसके साथ परिवार व्यवस्था और उसके बाद बड़े समाज व्यवस्था में अपनी भूमिका का निर्वाह करना है।
21	मुख्य बिंदु, अपने समझ को जाँचो	समाज एक साथ जीने वाले परिवारों का समूह है, जिनके लक्ष्य(मानव लक्ष्य) एक समान होते हैं। व्यवस्थित समाज का आधार परिवार में व्यवस्था है, जिसका आधार मानव में व्यवस्था है।
	अध्याय-10 : प्रकृति में व्यवस्था – अंर्तसंबंध, स्व-नियंत्रण और परस्पर-पूरकता को समझना	
22	पुनरावृत्ति, चारों अवस्थाओं को समझना, चारों अवस्थाओं की क्रियायें	● प्रकृति, इकाईयों का समूह है- चैतन्य इकाईयाँ एवं जड़ इकाईयाँ। ● यद्यपि ये इकाइयाँ असंख्य हैं, फिर भी इनको चार अवस्थाओं में वर्गीकृत किया जा सकता है-1. पदार्थ-अवस्था2. प्राण-अवस्था 3. जीव-अवस्था4. ज्ञान-अवस्था ● चारों अवस्थाओं की क्रियायें -प्रत्येक अवस्था की कुछ निश्चित क्रियायें हैं। सभी चारों अवस्थाओं कीअलग-अलग पहचान उनकी क्रियाओं के आधार पर कर सकते हैं। "
23	चारों अवस्थाओं में अंतर्निहित प्रकृति-सहज धारणायें,चारों अवस्थाओं के स्वभाव	●चारों अवस्थाओं में अंतर्निहित प्रकृति-सहज धारणायें-धारणा' किसी भी इकाई की अपने होने की निश्चित व्यवस्था है। इस निश्चित व्यवस्था के आधार पर इकाई अपने निश्चित आचरण को प्रदर्शित करती है। ●चारों अवस्थाओं के स्वभाव-किसी इकाई के स्वभाव का अर्थ, उससे बड़ी व्यवस्था में उसकी प्रकृति सहज भागीदारी है। बड़ी-व्यवस्था का आशय उस बड़ी इकाई से है, जिसके एक अंग के रूप में वह इकाई है।

24	चारों अवस्थाओं की अनुषंगीयता,ज्ञान अवस्था के लिये शिक्षा-संस्कारकामहत्व,प्रकृति में प्रचुरता,	●चारों अवस्थाओं की अनुषंगीयता-अनुषंगीयता का आशय इकाइयों में होने वाली उस विधि से है, जिससे वे अपने निश्चित आचरण की निरंतरता को पीढ़ी दर पीढ़ी सुनिश्चित बनाये रखती हैं। ●ज्ञान अवस्था के लिये शिक्षा-संस्कार का महत्व-मानवीय शिक्षा-संस्कार के माध्यम से, हम स्वयं में सही-समझ सुनिश्चित कर सकते हैं। जिससे स्वयं में सही-भाव सुनिश्चित होगा। सही-समझ और सही-भाव के साथ हम स्वयं में व्यवस्था और सुख की निरंतरता सुनिश्चित कर पायेंगे ● प्रकृति में प्रचुरता है अर्थात किसी भी अवस्था के लिये जो भी आवश्यक है, वह प्रकृति में पर्याप्त उपलब्ध है।
25	मुख्य बिंदु, अपने समझ को जाँचे	● प्रकृति, इकाईयों का समूह है। ● इकाइयाँ को उनकी क्रियाओं, धारणाओं, स्वभाव और अनुषंगीयता के माध्यम से समझा जा सकता है। ● प्रथम तीनों अवस्थाओं में (ज्ञान अवस्था के अतिरिक्त) परस्पर-पूरकता के संबंधों का निर्वाह देखा जा सकता है। प्रथम तीन अवस्थाएं, मानव के लिये पूरक हैं। ● मानव को अनुभव, बोध और चिंतन की क्रियाओं में जागृत होने की आवश्यकता है; जिससे धारणा, स्वभाव और अनुषंगीयता सुनिश्चित हो सके ● प्रकृति चारों अवस्थाओं की मात्रा के घटते हुये क्रम में इस प्रकार से व्यवस्थित है: पदार्थ-अवस्था >> प्राण-अवस्था >> जीव-अवस्था >> ज्ञान-अवस्था। यह मानव में समृद्धि की संभावना का आश्वासन देती है। "● प्रकृति में उत्पादन प्रक्रिया चक्रीय है एवं परस्पर-संवर्धन को सुनिश्चित करने वाली है। ● व्यवस्था, प्रकृति की संरचना में ही अंतर्निहित है अर्थात् यह पहले से ही है। हमें इसे उत्पन्न नहीं करना है।
	<u>अध्याय-11 : अस्तित्व में व्यवस्था - विभिन्न स्तरों पर सह-अस्तित्व को समझना</u>	
26	पुनरावृत्ति'अस्तित्व'- व्यापक (शून्य) में इकाइयाँ,शून्य और इकाइयों को समझना, इकाइयाँ आकार में सीमित है; शून्य असीमित है,इकाइयाँ क्रिया हैं, वे क्रियाशील हैं; शून्य "क्रिया-शून्य" है	अस्तित्व है - जो भी विद्यमान है, या जो भी है या जो भी होना है, व्यवस्था में है।
27	संपृक्तता को समझना ,इकाइयाँ शून्य में उर्जित हैं,इकाइयाँ शून्य में स्व-व्यवस्थित हैं,इकाइयां शून्यके सह-अस्तित्व में दूसरी इकाइयों के साथ संबंध को पहचानती हैं और निर्वाह करती हैं	अस्तित्व सह-अस्तित्व है, जो शून्य में संपृक्त इकाइयों के रूप में है।
28	अस्तित्व सह-अस्तित्व के रूप में - शून्य में संपृक्त इकाइयाँ	इकाइयाँ दो प्रकार की हैं - जड़ इकाइयाँ एवं चैतन्य इकाइयाँ। सभी इकाइयों का आकार सीमित है। ये क्रिया हैं, और अन्य इकाइयों के साथ परस्परता में भागीदारी करते हुये क्रियाशील हैं।
29	मुख्य बिंदु,अपनी समझ को जाँचे	शून्य असीमित है, सर्वव्यापी है और क्रियाशून्य है।इकाइयाँ शून्य में संपृक्त हैं।
30	सार संक्षेप	

कक्षा १२ का पाठ्यक्रम

सत्र	विषय	अभ्यास पुस्तिका के लिए बिंदु
1	**<u>अध्याय *1 :* मूल्य-शिक्षा को समझना.</u>** तृप्ति-पूर्वक जीना, तृप्ति-पूर्वक जीने के लिये शिक्षा , मूल्य-शिक्षा, कौशल-शिक्षा,मूल्य एवं कौशल की परस्पर-पूरकता, कौशल से अधिक मूल्य की वरीयता	• हम सभी तृप्ति-पूर्ण, व्यवस्थित जीवन जीना चाहते हैं और उसी के लिये कार्य कर रहे हैं। इसे ही हम मूल्यवान मानते हैं। • किसी वस्तु का मूल्य बड़ी व्यवस्था में उसकी भागीदारी है, जिसका कि वह हिस्सा है। • मूल्य-शिक्षा, शिक्षा का वह हिस्सा है जो मानव की बड़ी व्यवस्था में भागीदारी की समझ और वैसा ही जीने को सुनिश्चित करता है।
2	मूल्य-शिक्षा की आवश्यकता और उसके प्रमुख आशय का महत्व, समग्र- दृष्टि का विकास, समग्र दृष्टि के साथ जीने के लिये कार्यक्रम की स्पष्टता,नैतिक-योग्यता का विकास, मूल्य-शिक्षा के लिये दिशानिर्देश-सार्वभौम, तर्कसंगत, स्वाभाविक और जाँचने योग्य, सर्वसम्मिलित, व्यवस्था को सुनिश्चित करने वाला, मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु, मूल्य-शिक्षा की प्रक्रिया: स्व-अन्वेषण	• मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु के लिये आवश्यक है कि वह सार्वभौम, तार्किक, स्वाभाविक और जाँचने योग्य, सर्व-सम्मिलित एवं व्यवस्था को सुनिश्चित करने वाली हो। • मूल्य-शिक्षा की विषय-वस्तु में मानव के जीने के सभी स्तर एवं मानव के जीने के सभी आयाम सम्मिलित हों। • नैतिकता, निश्चित मानवीय आचरण की अभिव्यक्ति है, मानव के व्यवहार, कार्य, और बड़ी व्यवस्था में उसकी भागीदारी के रूप में, जो स्वयं और शेष-प्रकृति के बारे में हमारी समझ का परिणाम है।
3	**<u>अध्याय-2 : स्व-अन्वेषण - मूल्य शिक्षा की प्रक्रिया.</u>** स्वयं में संवाद, स्व-अन्वेषण की प्रक्रिया, सहज-स्वीकृति की - सही समझ का आधार, स्व-अन्वेषण के प्रमुख आशय	• स्वान्वेषण, स्वयं में संवाद की एक प्रक्रिया है- "जैसा मैं हूँ" (मेरी इच्छा, विचार और आशा) और "जैसा होना मुझे सहज स्वीकार्य है" (मेरी सहज-स्वीकृति) के बीच। जब हम भाव और उद्देश्य से जुड़े प्रश्नों के बारे में अपनी सहज-स्वीकृति का संदर्भ लेते हैं, तो हमें स्वयं में ही सही उत्तर मिलता है। • जब, "जैसा मैं हूँ" (मेरी इच्छा, विचार और आशा) और मेरी सहज-स्वीकृति में संगीत (Harmony) होता है, तो मैं सुख की स्थिति में होता हूँ। जब इन दोनों के बीच में अंतर्विरोध होता है, तो मैं अव्यवस्था और दुःख की स्थिति में होता हूँ।
4	**<u>अध्याय-3:मानव की मूल चाहना एवं उसकी पूर्ति,</u>** मानव की मूल चाहना- सुख समृद्धि और उसकी निरंतरता, मानव की मूल चाहना की पूर्ति के लिये आधारभूत आवश्यकतायें, वरीयता-सही समझ, संबंध और सुविधा, मानव चेतना का विकास, समग्र विकास, शिक्षा-संस्कार की भूमिका	• मानव की मूल चाहना निरंतर सुख और समृद्धि की स्थिति में होनाहै। जिनको हम निरंतर बनाये रखना चाहते हैं। • सही-समझ, संबंध और सुविधा इन तीनों के साथ इसी वरीयता क्रम में जीने से, मानव में तृप्ति होती है। • जीने को समझना और इसके ठीक-ठीक निर्वाह को सुनिश्चित करना ही मानव-चेतना में जीना है। • मानव-चेतना के विकास में शिक्षा-संस्कार(Education-Sanskar)की महत्वपूर्ण भूमिका है।दूसरे मानव के साथ संबंध पूर्वक जीने की योग्यता और साथ ही साथ समृद्धि के भाव को सुनिश्चित करने के लिये आवश्यक सुविधा की पहचान जरुरी है
5	**<u>अध्याय-4 : सुख और समृद्धि को समझना-इनकी निरंतरता एवं पूर्ति के लिये कार्यक्रम</u>** सुख के अर्थ को समझना, निरंतर सुख के लिये कार्यक्रम, समृद्धि के अर्थ को समझना, सुख की प्रचलित मान्यताओं पर एक दृष्टि,सुख के लिये कार्यक्रम कार्यक्रम का सहज निष्कर्ष	• सुख एक निश्चित वास्तविकता है, जिसे परिभाषित कर सकते हैं और समझ भी सकते हैं। • जिस स्थिति/परिस्थिति में मैं हूँ, यदि उसमें संगीत/व्यवस्था है, तो उस स्थिति/परिस्थिति में जीना मुझे सहज स्वीकार्य होता है। इस संगीत/व्यवस्था की स्थिति में जीना ही सुखहै। • ऐसी स्थिति/परिस्थिति जिसमें अंतर्द्वंद/अव्यवस्था हो, उस स्थिति/परिस्थिति में जीना मुझे सहज स्वीकार्य नहीं होता है।इस अंतर्द्वंद/अव्यवस्था की स्थिति में जीने के लिये बाध्य होना ही दुखहै। •हम व्यक्ति के रूप में, परिवार के एक सदस्य के रूप में, समाज के एक सदस्य के रूप में और प्रकृति/अस्तित्व की

		एक इकाई के रूप में जीतेहैं। यह हमारे जीने का सम्पूर्ण फैलाव है। •
6	**<u>अध्याय-5 : मानव को स्वयं और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में समझना</u>** 'स्वयं(मैं)' और शरीर के सह-अस्तित्व के रूप में मानव, स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें**,** 'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति, स्वयं(मैं)' और शरीर की क्रियायें,	• मानव,चैतन्य इकाई अर्थात् 'स्वयं(मैं)' और जड़ इकाई अर्थात् 'शरीर' का सह-अस्तित्व है। ये दोनों एक दूसरे के साथ सह-अस्तित्व में है। स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकतायें अलग-अलग प्रकार की हैं। • 'स्वयं(मैं)' की आवश्यकता की पूर्ति सही-समझ और सही-भाव से की जा सकती है, जबकि शरीर की आवश्यकता की पूर्ति भौतिक-रासायनिक वस्तुओं से की जा सकती है।
7	स्वयं(मैं) और शरीर की अनुक्रिया, स्वयं(मैं), चैतन्य इकाई और शरीर, जड़ इकाई के रूप में, मुख्य भ्रम - मानव को केवल शरीर मानना, मानव के केंद्र में स्वयं(मैं) है,	• चैतन्य (स्वयं) की आवश्यकता की पूर्ति चैतन्य क्रियाओं से और जड़ (शरीर)की आवश्यकता की पूर्ति जड़ वस्तुओं से करते हैं • शरीर की अनुक्रिया निश्चित है, यह पहचानने और निर्वाह-करने के रूप मेंहै।'स्वयं(मैं)' की अनुक्रिया जानने, मानने, पहचानने और निर्वाह-करने के रूप में है। • मानव में व्यवस्था का अर्थ,'स्वयं(मैं)' और शरीर की आवश्यकताओं की पूर्ति को सुनिश्चित करना एवं' स्वयं(मैं)' और शरीर के बीच व्यवस्था को सुनिश्चित करना है।
8	**<u>अध्याय-6 : स्वयं में व्यवस्था- 'स्वयं(मैं)' को समझना-</u>** 'स्वयं(मैं)' की क्रियायें, क्रियाओं का संयुक्त रूप- कल्पनाशीलता कल्पनाशीलता की स्थिति, कल्पनाशीलता के संभावित स्रोत-मान्यता, संवेदना और सहज-स्वीकृति, तीनों स्रोतों से प्रेरित कल्पनाशीलता के परिणाम – स्वतंत्रता या परतंत्रता?	• 'स्वयं(मैं)' अपनी चित्रण, विश्लेषण-तुलन, चयन-आस्वादन में निरंतर क्रिया शील रहताहै। ये सभी क्रियायें मिलकर कल्पनाशीलता कहलाती हैं।कल्पनाशीलता, 'स्वयं(मैं)' में निरंतर चलती ही रहती है। • सभी इच्छायें, सभी निर्णय, सभी चयन, कल्पनाशीलता में ही होते जिसमें'शरीर'का यंत्र के रूप में उपयोग होता है। कल्पनाशीलता, व्यवहारऔर कार्य से जुड़ती है।इस दृष्टि से कल्पनाशीलता (संग्रहित संस्कार) 'स्वयं(मैं)' के केंद्र में है। • जब कल्पनाशीलता,मान्यता या संवेदना के द्वारा प्रेरित होती हैतो यह किसी बाह्यस्रोत के अधीन रहती है,यही पर तंत्रता है। • जब कल्पनाशीलता, सहज-स्वीकृति के द्वारा निर्देशित होती है तो यही 'स्वयं(मैं)'में संगीत की स्थिति है, यही स्वतंत्रता है।
9	आगे का मार्ग - स्व-अन्वेषण के माध्यम से 'स्वयं(मैं)' में व्यवस्था सुनिश्चित करना, 'स्वयं(मैं)' में व्यवस्था को विस्तार से समझना, अभ्यास-1 के चरण 1 से 3	•संस्कार वो 'स्वीकृतियां' हैं जो हमारी सभी कल्पनाशीलताओं के योगफल से निर्धारित होती है। संस्कार= ∑ [इच्छा(सभी) + विचार(सभी) + आशा(सभी)] से निर्धारित स्वीकार्यतायें हैं। हमारे संस्कारों में निम्नलिखित आधार पर परिवर्तन होता है: संस्कार(t+1) = संस्कार(t)+ वातावरण(t)+ अध्ययन(t) यदि हम अपनी सहज-स्वीकृति के आधार पर स्वान्वेषण कर रहे हैं, तो इससे नवनिर्मित संस्कार सौहार्दपूर्ण होंगे अर्थात् संगीत में होंगे और व्यवस्था में होंगे। • कल्पनाशीलता को प्रेरित करने वाले तीन संभावित स्रोतहैं-मान्यतायें, संवेदनायें और सहज-स्वीकृतियाँ।

10	अभ्यास 1 के चरण 4 से 7	
11	**<u>अध्याय-7 : 'शरीर' के साथ 'स्वयं(मैं)' की व्यवस्था - स्वास्थ्य और संयम को समझना</u>** 'स्वयं(मैं)' दृष्टा-कर्ता-भोक्ता के रूप में ('शरीर' एक यंत्र के रूप में), 'शरीर' एक स्व-व्यवस्थित प्रणाली और 'स्वयं(मैं)' के एक यंत्र के रूप में, 'स्वयं(मैं)' की 'शरीर' के साथ व्यवस्था, स्वास्थ्य एवं संयम के लिये कार्यक्रम, 'स्वयं(मैं)' और 'शरीर' के बीच व्यवस्था के प्रकाश में समृद्धि की पुनरावृत्ति, अभ्यास-2 के सातों चरण	• मानव के केंद्र में, 'स्वयं(मैं)'है। प्रत्येक निर्णय 'स्वयं(मैं)' के द्वारा ही लिया जाता है और यदि आवश्यक होता है तो 'शरीर' को एक यंत्र की तरह उपयोग कर के उस निर्णय को परस्परता में अभिव्यक्त किया जाता है। • मानव के अस्तित्व के केंद्र में 'स्वयं(मैं)' ही है।यही दृष्टा है अर्थात् जो समझने वाला है; यही कर्ता है अर्थात् जो निर्णय लेने वाला है; यही भोक्ता है या भोगने वाला है अर्थात् जो सुख या दुख महसूस करता है। • शरीर'एक स्व-व्यवस्थित, जड़ इकाई है,जिसका उपयोग 'स्वयं(मैं)' यंत्र या उपकरण के रूप में करता है। और'स्वयं(मैं)','शरीर'के पोषण, संरक्षण, सदुपयोग की जिम्मेदारी को स्वीकारता है।जिम्मेदारी का यही भाव,संयम का भाव कहलाता है। • संयम के भाव के साथ 'स्वयं(मैं)', 'शरीर' के साथ व्यवस्था को सुनिश्चित करने के योग्य हो पाता है जिससे 'शरीर'में स्वास्थ्य सुनिश्चित होता है • भौतिक-सुविधा 'शरीर'की आवश्यकता है, इसलिये भौतिक-सुविधा का उत्पादन, संरक्षण और सदुपयोग (स्वयं के लक्ष्य की पूर्ति हेतु) मानव के कार्यक्रम का एक भाग है।

12	**<u>अध्याय 8: परिवार मे व्यवस्था- मानव-मानव संबंधों में मूल्य को समझना</u>** मानव-मानव परस्परता में जीने की मूल इकाई-परिवार,परिवार में व्यवस्था का आधार - संबंधों में भाव,संबंधों को समझना,संबंधों में सहज-स्वीकार्य भाव (मूल्य) – नौ हैं और उनभावों के निर्वाह और इन के सही मूल्यांकन से उभय-सुख होताहै।,संबंधके बारे में महत्वपूर्ण बिन्दु,मानव-मानव संबंधों में आधार मूल्य- विश्वास ,विश्वास से संबंधित मुख्यबिंदु, मानव-मानव संबंधों में मूल्य-सम्मान, सम्मान की संपूर्ण विषय-वस्तु – हमारी परस्पर-पूरकता है, मानव-मानव संबंध में मूल्य-स्नेह, ममता और वात्सल्य,	• संबंध पहले से हैं ही। संबंध एक स्वयं(मैं1) और दूसरे स्वयं(मैं2) के बीच होता है। हम संबंधों में जुड़े हुये ही रहते हैं चाहे हम इन्हें पहचान पायें या न पहचान पायें। जब हम संबंधों को पहचान पाते हैं तो इनको स्वीकार भी पाते हैं और इनके निर्वाह के बारे में सोच भी पाते हैं। • संबंधों का आधार भाव हैं- एक स्वयं(मै1) में दूसरे स्वयं(मैं2) के लिये। भाव 'स्वयं(मैं)' में होते हैं न कि 'शरीर' में। संबंधो के निर्वाह में भाव ही मौलिक हैं। • जब हम 'स्वयं(मैं)' में इन सहज-स्वीकार्य भावों को सुनिश्चित कर पाते हैं; दूसरे से साझा कर पाते हैं; और • इन भावों का सही-सही मूल्यांकन कर पाते हैं तब उभय-सुख सुनिश्चित होता है। संबंधों में सामान्यतः यह गलती होती रहती है कि हम अपना आंकलन अपने चाहना के आधार पर करते हैं और दूसरों का आंकलन उनकी योग्यता के आधार पर करते हैं। ऐसा करते हुये हम यह मान लेते हैं कि हम अच्छे व्यक्ति हैं और समस्यायें तो दूसरों में है। • जब मैं 'स्वयं(मैं)' की केन्द्रीय भूमिका को देख पाता हूँ, तो अपने साथ-साथ दूसरे का भी मूल्यांकन 'स्वयं' के आधार पर ही करता हूँ, न कि शरीर, सुविधा या मान्यता के आधार पर।
13	स्नेह, ममता और वात्सल्य से संबंधित मूलबिन्दु, मानव-मानव संबंध में मूल्य- श्रद्धा, गौरव और कृतज्ञता, गौरव और कृतज्ञता, श्रद्धा, कृतज्ञता और गौरव से संबंधित मूलबिन्दु, मानव-मानव संबंध में पूर्णमूल्य-प्रेम, संबंध के निर्वाह में भौतिक-सुविधाओं की भूमिका, न्याय की समझ, प्रेम एवं न्याय की समझ से संबंधित मूलबिन्दु	· ममता के भाव के अलावा, अन्य भावों के निर्वाह के लिये भौतिक सुविधा की आवश्यकता मात्र प्रतीकात्मक है (संबंधों में अधिकांश शिकायतें इन भावों के निर्वाह में होने वाली कमी के कारण हैं और कोई भी भौतिक सुविधा इस कमी की पूर्ति नहीं कर सकती)। • संबंधों को समझने के आधार पर जब भाव हममें सुनिश्चित होते हैं, तो वे बिना किसी शर्त निरंतरता में बने रहते हैं। जब भाव घटनाओं पर आधारित होते हैं तो उनमें निरंतरता नहीं हो पाती क्योंकि ये शर्तों पर आधारित होते हैं। नकारात्मक भाव मूलतः सही भाव अर्थात् सहज-स्वीकार्य भाव न होने के कारण आते हैं। • प्रेम के बारे में सामान्य भ्रम यह है कि ये संवेदना अर्थात् इंद्रिय सुख पर आधारित है; और वास्तव में यह केवल मोह अर्थात् आसक्ति है। • प्रेम का भाव अखंड-समाज का आधार है। प्रेम के भाव के साथ ही परिवार में न्याय सुनिश्चित हो पाता है एवं यही न्याय परिवार से शुरू होकर विश्व परिवार की तरफ अग्रसर हो पाता है जो अंततः अखंड-समाज के रूप में अभिव्यक्त होगा।
14	**<u>अध्याय 9: समाज में व्यवस्था - सार्वभौमिक मानवीय व्यवस्था को समझना</u>** पुनरावृत्ति, मानवलक्ष्यकोसमझना, वर्तमान स्थिति का अवलोकन, आगे का मार्ग, मानवीय व्यवस्था: मानव लक्ष्य और इनकी पूर्ति केआयाम, मानवीय व्यवस्था केआयाम- शिक्षा-संस्कार, स्वास्थ्य और संयम	· समाज एक साथ जीने वाले परिवारों का समूह है, जिनके लक्ष्य(मानव लक्ष्य) एक समान होते हैं। व्यवस्थित समाज का आधार परिवार में व्यवस्था है, जिसका आधार मानव में व्यवस्था है। · समाज मे रहने वाले मानव के लक्ष्य : प्रत्येक व्यक्ति मे सही-समझ और सही भाव (सुख), प्रत्येक परिवार मे समृद्धि, समाज मे अभय (विश्वास), प्रकृति/अस्तित्व मे सह-अस्तित्व (परस्पर पूरकता)

15	उत्पादन-कार्य, न्याय-सुरक्षा, विनिमय- कोष, मानवीय समाज में व्यवसाय, मानवीय समाज में व्यवसाय, सार्वभौम मानवीय व्यवस्था- परिवार व्यवस्था से विश्वपरिवार व्यवस्था तक, क्षेत्र - परिवार व्यवस्था से विश्वपरिवार व्यवस्था- सार्वभौम मानवीय व्यवस्था, सही-समझ के सहज निष्कर्ष, समाज में मेरी भागीदारी (मूल्य),	· परिवार में सुख सुनिश्चित करने के लिये परिवार के प्रत्येक सदस्य, विशेषकर अगली पीढ़ी के सदस्यों में सही-समझ और सही-भाव के विकास में सहायता करना। • परिवार में प्रत्येक सदस्य के शरीर के पोषण, संरक्षण और सदुपयोग के माध्यम से उनके स्वास्थ्य को सुनिश्चित करना। • परिवार में समृद्धि को सुनिश्चित करने के लिये, परिवार के प्रत्येक सदस्य की सुविधा की आवश्यकता की पहचान करने एवं इसके उत्पादन, संरक्षण और सदुपयोग करने में सहायता करना। • परिवार में एक या एक से अधिक सदस्यों का बड़े समाज में एक या एक से अधिक मानवीय व्यवस्था के आयामों में भागीदारी के लिये उपलब्ध होने में सहयोग करना।
16	**<u>अध्याय-10 : प्रकृति में व्यवस्था – अंतर्संबंध, स्व-नियंत्रण और परस्पर-पूरकता को समझना</u>** पुनरावृत्ति, इकाइयों के समूह के रूप में प्रकृति, इकाइयों का चार अवस्थाओं में वर्गीकरण, चारों अवस्थाओं के बीच अंर्तसंबंध और परस्पर-पूरकता, प्रकृति में स्व-नियंत्रण,	• प्रकृति, इकाईयों का समूह है- चैतन्य इकाईयाँ एवं जड़ इकाईयाँ। • यद्यपि ये इकाइयाँ असंख्य हैं, फिर भी इनको चार अवस्थाओं में वर्गीकृत किया जा सकता है- प्रकृति की असंख्य इकाईयों का वर्गीकरण चार अवस्थाओं (पदार्थ-अवस्था, प्राण-अवस्था, जीव-अवस्था और ज्ञान-अवस्था) मे। • प्रथम तीनों अवस्थाओं में (ज्ञान अवस्था के अतिरिक्त) परस्पर-पूरकता के संबंधों का निर्वाह देखा जा सकता है। प्रथम तीन अवस्थायें, मानव के लिये पूरक हैं।
17	चारों अवस्थाओं को समझना- चारोंअवस्थाओं की क्रियायें, चारों अवस्थाओं मेंअंतर्निहित प्रकृति-सहज धारणायें, चारों अवस्थाओं के स्वभाव, चारों अवस्थाओं की अनुषंगीयता, ज्ञान अवस्था के लिये शिक्षा-संस्कार का महत्व, प्रकृति में प्रचुरता	· प्रकृति में प्रचुरता है अर्थात् किसी भी अवस्था के लिये जो भी आवश्यक है, वह प्रकृति में पर्याप्त उपलब्ध है। अपने होने में रूप में प्रकृति चारों अवस्थाओं की मात्रा के घटते हुये क्रम में इस प्रकार से व्यवस्थित है: पदार्थ-अवस्था >> प्राण-अवस्था >> जीव-अवस्था >> ज्ञान-अवस्था। यह मानव में समृद्धि की संभावना का आश्वासन देती है। • प्रकृति में उत्पादन प्रक्रिया चक्रीय है एवं परस्पर-संवर्धन को सुनिश्चित करने वाली है। सभी भौतिक सुविधायें जो भी हम उत्पादन करते हैं, वह प्रकृति के इन तीन अवस्थाओं पर कार्य करने से ही उत्पादित होती हैं। · ·परस्पर-पूरकता के निर्वाह के लिये उत्पादन प्रक्रिया को भी चक्रीय एवं परस्पर-पूरक होना आवश्यक है। इस प्रकार से संपूर्ण प्रकृति अर्थात् प्रकृति की सभी अवस्थायें व्यवस्था में हो सकती हैं क्योंकि प्रथम तीन अवस्थायें तो पहले से ही व्यवस्था में हैं।
18	मानव की अन्य तीन अवस्थाओं पर निर्भरता, प्रकृति में ज्ञान अवस्था का परस्पर-पूरकता के संबंध का निर्वाह, समझ का सहज प्रतिफल, प्रकृति में मेरी भागीदारी(मूल्य), मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	• व्यवस्था, प्रकृति की संरचना में ही अंतर्निहित है अर्थात् यह पहले से ही है। हमें इसे उत्पन्न नहीं करना है। मानव को व्यवस्था में जीने के लिये, सभी प्रावधान प्रकृति में उपस्थित हैं; हमें सिर्फ करना यह है कि बनी हुई इस व्यवस्था को समझना है और इसके अनुसार दूसरे मानवों एवं अन्य अवस्थाओं के साथ परस्पर-पूरकता के निर्वाह को सुनिश्चित करते हुये जीना है।
19	**अध्याय-11 : अस्तित्व में व्यवस्था - विभिन्न स्तरों पर सह-अस्तित्व को समझना** 'अस्तित्व'- व्यापक (शून्य) में इकाइयाँ, शून्य और इकाइयों को समझना, इकाइयाँ आकार में सीमित है; शून्य असीमित है, संपृक्तता को समझना, अस्तित्व सह-अस्तित्व के रूप में - शून्य में संपृक्त इकाइयाँ,	• अस्तित्व है - जो भी विद्यमान है, या जो भी है या जो भी होना है, व्यवस्था में है। • अस्तित्व सह-अस्तित्व है, जो शून्य में संपृक्त इकाइयों के रूप में है।

20	जड़ और चैतन्य इकाइयाँ, जड़ इकाइयों का वर्गीकरण, चैतन्य-इकाइयों का वर्गीकरण जड़-इकाइयों के साहचर्य में,अस्तित्वगत दृष्टि में विकास	• इकाइयाँ दो प्रकार की हैं - जड़ इकाइयाँ एवं चैतन्य इकाइयाँ। सभी इकाइयों का आकार सीमित है। ये क्रिया हैं, और अन्य इकाइयों के साथ परस्परता में भागीदारी करते हुये क्रियाशील हैं। • शून्य असीमित है, सर्वव्याप्त है और क्रियाशून्य है।
21	विभिन्न स्तरों पर सह-अस्तित्व की अभिव्यक्ति, अस्तित्व में मानव की भागीदारी को समझना, समझ का सहज प्रतिफल, अस्तित्व में मेरी भागीदारी (मूल्य), मुख्यबिंदु, अपनी समझ को जाँचे	• सह-अस्तित्व सर्वत्र व्याप्त है। प्रकृति की चारों अवस्थायें सह-अस्तित्व के प्रकटीकरण की सहज अभिव्यक्ति हैं, जो अंततोगत्वा सार्वभौमिक व्यवस्था के रूप में परिलक्षित होती हैं। इस सार्वभौमिक व्यवस्था को मानव के द्वारा पूर्ण किया जाना शेष है। • अस्तित्व में मानव की भूमिका है: सह-अस्तित्व को समझना और सह-अस्तित्व मे जीना
22	**<u>अध्याय-12 : सार्वभौम मानवीय मूल्य (UHV) और नैतिक मानवीय आचरण का आधार</u>** पुनरावृत्ति, मानव के जीने के विभिन्न आयामों में मूल्य, सही-समझ का सहज प्रतिफल सार्वभौम मूल्य, नैतिक मानवीय आचरण की निश्चितता	● नैतिक मानवीय आचरण की निश्चितता को मूल्य, नीति और चरित्र की निश्चितता के संदर्भ में समझा जा सकता है।
23	मानवीय चेतना का विकास, मूल्य आधारित जीने का आशय, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	● सही-समझ मानव को पशु-चेतना से मानव-चेतना में संक्रमण करने में सहायक है। ● सही-समझ मानव के व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक एवं प्रकृति/अस्तित्व के स्तर पर जीने में बेहतरी के सकारात्मक संकेत प्रदान करने में सहायता करेगा।
24	**अध्याय- 13 : सही-समझ के प्रकाश में व्यावसायिक नैतिकता** पुनरावृत्ति, परिचय, व्यवसाय - समग्र मानव लक्ष्य के संदर्भ में, नैतिक योग्यता सुनिश्चित करना, नैतिक योग्यता के प्रमुख लक्षणों का विवरण , व्यावसायिक नैतिकता के मुद्दे- वर्तमान परिदृश्य, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	● व्यवसाय का आशय, समग्र मानवीय लक्ष्य की पूर्ति हेतु, बड़ी व्यवस्था में अर्थात् समाज और प्रकृति में मानव की सार्थक भागीदारी से है, और इस प्रक्रिया में परिवार के लिये आवश्यक सुविधा भी उपलब्ध हो पाती है। ● व्यक्तियों (व्यवसायी) में मूल्यों के साथ जीने की योग्यता और नैतिक योग्यता को विकसित करना; व्यावसायिक नैतिकता को सुनिश्चित करने का एक प्रभावी तरीका है।
25	**अध्याय-14 : सार्वभौम मानवीय व्यवस्था की ओर समग्र विकास** पुनरावृत्ति, समग्र मानवीय लक्ष्य को समझना, सार्वभौम मानवीय व्यवस्था और समग्र विकास के लिये दृष्टि, मानवीय परंपरा के लिये मार्ग प्रशस्त करना, मानवीय शिक्षा, मानवीय संविधान, मुख्यबिंदु, अपनी समझ को जाँचे	● सही-समझ हमारे समग्र मानवीय लक्ष्य को पहचानने में सहायक है, जो कि सही-समझ एवं सही-भाव (सुख), समृद्धि, अभय एवं सह-अस्तित्व (परस्पर-पूरकता) के रूप में है। ● व्यवस्था की समझ से हमें मानवीय शिक्षा एवं मानवीय संविधान का आधार एवं ढांचा (framework) मिलता है। • सार्वभौमिक मानवीय व्यवस्था की संकल्पना समाज के विभिन्न आयामों एवं व्यवस्था के विभिन्न चरणों (पारिवार व्यवस्था से विश्व परिवार व्यवस्था तक) के रूप में की जा सकती है।

26	**अध्याय-15 : समग्रात्मक प्रौद्योगिकियों, उत्पादन व्यवस्थाओं एवं प्रबंधन मॉडलों के लिये दृष्टि** पुनरावृत्ति, परिचय, मूल्यांकन के लिये समग्रात्मक मापदंड- प्रौद्योगिकी के लिये मापदंड, उत्पादन व्यवस्थाओं के लिये मापदंड, प्रबंधन मॉडलों के लिये मापदंड, प्रचलित व्यवस्थाओं का विवेचनात्मक मूल्यांकन, प्राकृतिक व्यवस्थाओं एवं पारंपरिक अभ्यासों से सीख	• मूल्यांकन का समग्र मापदंड मूल रूप से समग्र मानवीय लक्ष्य के सही अवलोकन से सुनिश्चित हो पाता है।
27	पारंपरिक प्रौद्योगिकी एवं व्यवस्थाओं के कुछ विशिष्ट उदाहरण, समग्रात्मक सामुदायिक मॉडल को समझना – सभी स्तरों पर व्यवस्था के लिये कार्य करना, केस-स्टडीज के विषय, मुख्य बिंदु, अपनी समझ को जाँचे	• प्रकृति की व्यवस्थाओं का एवं समग्रता में जीने से संबंधित परंपरागत अभ्यासों का सावधानी पूर्वक किया गया अध्ययन एवं मूल्यांकन वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप उपयुक्त व्यवस्थाओं के विकास में सहायक हो सकता है।
28	**अध्याय16: सार्वभौम मानवीय व्यवस्था की ओर यात्रा- आगे का मार्ग** पुनरावृत्ति, मुख्य केन्द्रीय संदेश, स्वान्वेषण की आवश्यकता का अवलोकन, विभिन्न स्तरों पर व्यवस्था को समझने में सहयोग, चरण 1: व्यक्तिगत संक्रमण का चरण, चरण 2: समग्रात्मक विकास के लिये जन जागरूकता	
29	चरण 3: मुख्य धारा की शिक्षा के मानवीयकरण की ओर गति चरण 4: समुदायिक एवं शैक्षणिक संस्थाओं में समग्रात्मक जीने के मॉडल को विकसित करना, क्या यह संक्रमण बहुत कठिन है? सारांश	
30	सार-संक्षेप	

नोट ***1** (इन बिंदुओं के संदर्भ मे आपने क्या जांचा/ जाँचना है, क्या समझा है /समझना है और क्या आपके जीने मे आया/ आना है, इसकी जांच-परख। इसके अतिरिक्त अभ्यास कार्य, गतिविधियां (activities), परियोजनाएं (projects) भी दिया जा सकता है)
जीने का मतलब समझ, भाव, विचार, व्यवहार, कार्य, भागीदारी

विद्यार्थियों को ऐसी तालीम दी जानी चाहिए जिससे वे संसार के महान धर्मों को आदर के साथ सीख सकें।

–महात्मा गांधी

राष्ट्र-गीत

वन्दे मातरम्

श्री बंकिमचंद्र चट्टोपाध्याय : आनन्दमठ

वन्दे मातरम्, वन्दे मातरम्।
सुजलाम् सुफलाम् मलयज शीतलाम्।
शस्य श्यामलाम् मातरम्। वन्दे मातरम्।।
शुभ्रज्योत्स्नाम् पुलकित यामिनीम्।
फुल्ल कुसुमित द्रुमदल शोभिनीम्।।
सुहासिनीम् सुमधुरभाषिणीम्।
सुखदाम् वरदाम् मातरम्। वन्दे मातरम्।।

भारत का संविधान

मूल कर्तव्य अनुच्छेद 51क | Fundamental Duties Article **51**A

भारत के प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य होगा कि वह

(क) संविधान का पालन करे और उसके आदर्शों, संस्थाओं, राष्ट्र ध्वज और राष्ट्रगान का आदर करे;

(ख) स्वतंत्रता के लिए हमारे राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करने वाले उच्च आदर्शों को हृदय में संजोए रखे और उनका पालन करे;

(ग) भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करे और उसे अक्षुण्ण रखे;

(घ) देश की रक्षा करे और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करे;

(ङ) भारत के सभी लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना का निर्माण करे जो धर्म, भाषा और प्रदेश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो, ऐसी प्रथाओं का त्याग करे जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध है;

(च) हमारी सामासिक (composite) संस्कृति की गौरवशाली परंपरा का महत्व समझे और उसका परिरक्षण करे;

(छ) प्राकृतिक पर्यावरण की, जिसके अंतर्गत वन, झील, नदी और वन्य जीव हैं, रक्षा करे और उसका संवर्धन करे तथा प्राणि मात्र के प्रति दयाभाव रखे;

(ज) वैज्ञानिक दृष्टिकोण, मानववाद और ज्ञानार्जन तथा सुधार की भावना का विकास करे;

(झ) सार्वजनिक संपत्ति को सुरक्षित रखे और हिंसा से दूर रहे;

(ञ) व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में उत्कर्ष की ओर बढ़ने का सतत प्रयास करे जिससे राष्ट्र निरंतर बढ़ते हुए प्रयत्न और उपलब्धि की नई ऊँचाइयों को छू ले;

(ट) यदि माता-पिता या संरक्षक है, छह वर्ष से चौदह वर्ष तक की आयु वाले अपने, यथास्थिति, बालक या प्रतिपाल्य के लिए शिक्षा के अवसर प्रदान करे।